गजल, बधाई, कव्वाली, दोहा गजल, निहालदे, मल्हार तमाखू, जमाँई की, मारवाडी, मीराबाई, बारह मासा, इन्द्र सभा, धमाल, पूर्वी, मरहठी, होली, नोटकी जैसे तत्कालीन प्रचलित चालो पर पदो की रचना करके उसने पदो को अधिक से अधिक लोक प्रिय बनाने का प्रयास किया है। कवयित्री का उद्देश्य केवल अर्हद् भक्ति था इसलिए वह चाहती थी कि जन साधारण पदो को भगवान् के सामने गाकर अपनी भक्ति प्रदर्शित कर अपना आत्म कल्याण करे ।

आभार

चम्पाशतक के प्रकाशन के लिये प्रवन्ध कारिणी कमेटी के के सभी सदस्यो एव विशेषतः मन्त्री श्री गेंदीलालजी साह एडवोकेट का आभारी हूँ जिनके आग्रह से इसका शीघ्र प्रकाशन हो सका है। मैं डा० महेन्द्रसागरजी प्रचण्डिया अलीगढ एव श्री चन्दालालजी टोग्या, जयपुर (सुपौत्र चम्पादेवीजी) का आभारी हूँ जिन्होने शतक की कवयित्री के सम्बन्ध मे कितने ही तथ्यो की जानकारी देने का कष्ट किया है।

इनके अतिरिक्त मैं अपने सहयोगी भा० अनूपचन्दजी न्यायतीर्थ, सुगनचन्दजी जैन एव प्रेमचन्दजी रावका का भी आभारी हूँ जिन्होने इसके सम्पादन एव प्रकाशन मे अपना महत्वपूर्ण सहयोग दिया है।

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

पदानुक्रमणिका

क्र० स०	पद	पद स०

★

चम्पाशतक

चाल—रेखता

(१)

पडी मझधार मेरी नैया, उबारोगे तो क्या होगा ।
तरन तारन जगति पति हो, जु तारोगे तो क्या होगा ।। टेक ।।

फसा हू कर्म के फदे, पडा भवसिन्धु मे जाके ।
झकोले दु ख के निस दिन, जु काटोगे तो क्या होगा ।। पडी० १ ।।

चतुर गति भमर है जिसमे, भ्रमण की लहिर है तिसमे ।
पडा विधिवश जु मै उसमे, निकारोगे तो क्या होगा ।। पड़ी० २ ।।

ये भवसागर अथाही है, मेरी है नाव अति झझरी ।
सुनो यह अरज तुम स्वामी, सुधारोगे तो क्या होगा ।। पडी० ३ ।।

यहा कोई है नही मेरा, मेरे रक्षपाल तुम ही हो ।
बही जाती मेरी किश्ती, निहारोगे तो क्या होगा ।। पडी० ४ ।।

शरण 'चम्पा' ने लीनी है, भमर मे आगई नैया ।
मेरी विनती अपावन की, विचारोगे तो क्या होगा ।। पडी० ५ ।।

*

चाल—रेखता

(२)

तुम्हारी शान्ति यह मुद्रा, मेरे मन को लुभाती है।
सकल जञ्जाल को तजकर, निजातम लौ लगाती है ॥ टेक ॥

पदम अरु खड्ग आसन धर, नजर नासा पै आती है।
परिग्रह बिन नगन मूरत, निराकुल रस चखाती है ॥ तुम्हारी १ ॥

तिहारी वीतरागी छवि, विभावों को हटाती है।
इसी कारण तेरी भक्ति, मुझे निस दिन सुहाती है ॥ तुम्हारी २ ॥

तेरे दर्शन के करने से, विपति सर्व दूर होती है।
तुरत नस जाय एकीभाव,[१] जोहमसे विजाती[२] है ॥ तुम्हारी ३ ॥

कहू क्या आपकी महिमा, नही मति पार पाती है।
कहे कर जोडकर 'चम्पा' शरण गह शिर नवाती है ॥ तुम्हारी ४ ॥

---

१. एकान्त भाव—पदार्थों को एक ही दृष्टि मे देखने की क्रिया।
२ विजातीय—भाव—विपरीत स्वभाव वाले भाव।

चाल–रेखता

(३)

तिहारे ध्यान की मूरति अजब छवि को दिखाती है ।
विषय की वासना तजि कर, निजातम सों लगाती है ॥
॥ टेक ॥

तेरे दर्शन से हे स्वामी, लखा है रूप मैं मेरा ।
तजूं कब राग तन धन का, ये सब मेरे विजाती हैं ॥
तिहारे ध्यान० ॥ १ ॥

जगत के देव सब देखे, कोई रागी कोई द्वेषी ।
किसी के हाथ आयुध है, किसी को नारि भाती है ॥
तिहारे ध्यान० ॥२॥

जगत के देव हठग्राही, कुनय के पक्ष पाती है ।
तूही है सुनय का नेता, यतन तुमरे अघाती है ॥
तिहारे ध्यान० ॥ ३ ॥

मुझे कुछ चाह नहीं जग की, यही है चाह स्वामीजी ।
जपूं तुम नाम की माला, जु मेरे काम आती है ॥
तिहारे ध्यान० ॥ ४ ॥

तुम्हारी छवि निरख मेरी, निजातम लौ लगी स्वामी ।
यही लौ पार कर देगी, जु 'चम्पा' को सुहाती है ॥
तिहारे ध्यान० ॥ ५ ॥

*

चाल–रेखता

(४)

बिना जिन आपके स्वामी, नही कोई हमारा है ।
शरण तुम चरण की लीनी यही हमको सहारा है ॥
॥ टेक ॥

लखे तुम को जगत तारन, भवोदधि तरन के कारन ।
लही याते शरन स्वामी तुही सुख देन हारा है ॥
बिना जिन० ॥ १ ॥

तुम ही जग जाल के हरता, तुम ही शिव सुख के करता ।
तुम ही शिव[1]-रमन के भरता, तुम ही निज बोधि धारा है ॥
बिना जिन० ॥ २ ॥

तुम्ही ज्ञाता तुम ही भ्राता, तुम ही हो जगत के त्राता ।
कहे 'चम्पा' विपत वन मे, तुम्ही सुख देन हारा है ॥
बिना जिन० ॥ ३ ॥

---

१ मोक्ष लक्ष्मी

चाल–रेखता

(५)

श्री जिनराज की मूरति लक्ष अपना दिखाती है।
जगत के लक्ष सब तज के, निजातम लौ लगाती है॥
॥ टेक॥

इसी से वास वन लीना, पदम आसन अचल कीना।
निजातम देखने को दृष्टि नासा थिर सुहाती है॥
श्री जिनराज० ॥ १ ॥

किसी का लक्ष है तन धन, किसी का लक्ष है सज्जन।
किसी का लक्ष विसनो में किसी को नारि भाती है॥
श्री जिनराज० ॥ २ ॥

जिन्हो का लक्ष जैसा है, उन्हो का काज वैसा है।
लगाओ प्रीति आतम से, तुम्हारे काम आती है॥
श्री जिनराज० ॥ ३ ॥

बनावो लक्ष चेतन का, विचारो शाति छवि जिनकी।
इसी से सिद्ध आतम की जु 'चम्पा' को सुहाती है।
श्री जिनराज० ॥ ४ ॥

★

चाल—बधाई

(८)

शशि वदनी तरुणी रमणी जहा गावत हैं मधुरे स्वररी ।
चलो आज आनन्द वामा घर री । टेक ॥

वामा जननी जगतपति जनमो, आनन्द छायो त्रिभुवनरी ।
वर्ण वर्ण मणि चूर सची तहा पूरत चोक प्रमोद भरीरी ॥
शशिवदनी० ॥ १ ॥

ताडव नृत्य करत सुरपति तहा, तान लेत तन तन तनरी ।
रुणझण रुणझुण नेवर वाजत, घुघरू वजत छम छम छमरी ॥
शशिवदनी० ॥ २ ॥

किन्नर जिन गुन गान करत है, बीन वजे मधुरे स्वर री ।
राजभवन मे दान वढत है, जाचक भये धनाकर री ॥
शशिवदनी० ॥ ३ ॥

अस्वसेन के पुत्र भयो है, पारस कहे पूजे सगरी ।
'चम्पा' वलिहारी वा दिन की, प्रगट भयो जग हितकारी ॥
शशिवदनी० ॥ ४ ॥

★

चाल-बधाई

(६)

विघन हरन मरुदेवी के नदन आदीश्वर जिनराई ।
जाके चरण-कमल को निस दिन, सुरपति शीस नवाई ॥
॥ टेक ॥

तिहु जगनायक लायक ज्ञायक, सवही को सुखदाई ।
नाभिराय घर जनम लियो है त्रिभुवन आनन्द छाई ॥
विघन ०॥१॥

सची सहित सुरपति तहाँ आयो, अदभुत शोभ रचाई ।
ताडव नृत्य कियो सुरपति तहा, नख नख सुरी[1] नचाई ॥
॥विघन ०॥ २ ॥

रतनन चोक ज पूरि सची जव, आनन्द उर न समाई ।
किन्नर कर वर बीन वजावत, गावत श्रुत[2] सुखदाई ॥
विघन० ॥ ३ ॥

'चम्पा' धन्य घडी वा दिन की, त्रिभुवनपति उपजाई ।
मिथ्यातम के नाश करन कूं, ज्ञान भान दरसाई ॥
विघन० ॥ ४ ॥

---

१. सुरी–देविया २. श्रुत–कान

गजल

(१०)

श्री महावीर स्वामी जी, अचल शिवपुर पधारे है ।
शुकल धर ध्यान चौथे से, करम रिपु चूर डारे है ।
॥ टेक ॥

हुआ निर्वाण कल्याणक, श्री अतिवीर स्वामीका ।
सुरासुर आय कर कीना, महोत्सव वीर स्वामी का ।
भले सन्मति प्रभु मेरे, तुम्हारे नाम सारे है ॥
श्री महावीर ०॥ १ ॥

निकट पावापुरी नगरी, तहा से मोक्ष पाई है ।
भली कार्तिक बदी मावश, करम की जड नसाई है ।
दिवस धन आज का वह है, हुवा आनद हमारे है ॥
श्री महावीर ० ॥ २ ॥

निकस ससार के दुख से न फिर, जग माहि आते है ।
प्रभु दृग ज्ञान सुख वीरज, अनतानत पाते है ।
जगत के जाल को तज के, निजातम काज सारे है ।
श्री महावीर० ॥ ३ ॥

आपने तो निजानंद ले, वास शिवपुर में जा कीना ।
ये ही अरमान है स्वामिन, हमे प्रभु सग नहि लीना ।
कहे कर जोड कर 'चम्पा', शरण अब तुम्हारी निहारे है ॥
श्री महावीर ० ॥ ४ ॥

★

चाल--इन्द्र नारि करि करि सिंगार

(११)

हे दीनबन्धु जगपति उवार, भव सिन्धु माहि से लो निकार।
॥ टेक ॥

यह अगम अथाह पारवार, गति चार भमर जिसके मझार ।
अब खेवटिया तुमको निहार, मै शरन लही अब करो पार॥
॥ हे दीन बन्धु० ॥ १ ॥

तुम ही शरनागति अति उदार, हमरे जिनेन्द्र दुख टारटार।
मोहि देउ विमल कल्याण कार, सुखदायक ज्ञायक भाव सार॥
॥ हे दीनबन्धु ० ॥ २ ॥

तुम हो अनत गुण गण अपार, सब रागद्वेष दीने सुटार ।
रिपु आठ करम दोने पछार, याते शिवरमणी बनी नार ॥
॥ हे दीन बन्धु० ॥ ३ ॥

मोहि दीन जान कर दया धार, दुख सागर ते मोहि तार तार।
शिव करो हरो मम विधि दुचार[1] 'चम्पा' यह अरज कहै पुकार॥
॥ हे दीन बन्धु ०॥ ४ ॥

---

१ अष्ट कर्म

चाल-कव्वाली

(१२)

अरज सुनो प्रभु करुणापती, मुझे कर्मो ने आकर घेर लिया।
दर्शन ज्ञान जु लूट लिया, मुझे दीन बना कर जेल किया ॥
॥ टेक ॥

मोह का प्याला पिया जु दिया, मुझे तत्वो का बोध न होने दिया।
आतम शक्ति दवा जु दई, मुझे सशय के जाल में डाल दिया ॥
॥ अरज सुनो० ॥ १ ॥

मेरे ज्ञान को घात अज्ञान किया मुझे स्वपर विवेक न होने दिया।
मिथ्यात के फदे फास लिया मुझे सम्यक् दर्शन न होने दिया ॥
॥ अरज सुनो० ॥ २ ॥

विधि[1] आठो ने आनि के घेर लिया, मैंने या ही से आनि पुकार किया।
तुमसे तो कहू तो कहू किससे, इन दुष्टो का नाश तुम्हीने किया।
॥ अरज सुनो० ॥३॥

दीन के नाथ दयाल प्रभु मैने याही से आपसे अर्ज किया।
मुझे कर्मों की जेल से काढो प्रभु, अब 'चम्पा' ने शरण तुम्हारा लिया ॥
अरज सुनो ० ॥ ४ ॥

---

१ कर्म

चाल—गजल

(१३)

सकल सुख धरन मंगल करन, उत्तम शरण है ये ही।
श्री अरहंत आदिक पूज्य पदवी, करन है ये ही ॥
॥ टेक ॥

सब सारांश जिनमत का, पदारथ एक हैं ये ही ॥
सुनो विज्ञान अरु वैराग मिल, निज भाव है ये ही ॥
॥ सकल सुख ० ॥ १॥

सजन जो चाहते हो तुम निपट कल्याण आतम का।
विचारो ज्ञान मिल वैराग्य, ये है भाव आतम का ।
॥ सकल सुख ० ॥ २ ॥

विना इसके कदाचित भी, सफल नाहिं काज आतम का।
सम्हालो हर समय दोनों जु, चाहो राज आतम का ॥
॥ सकल सुख ० ॥ ३ ॥

विना वैराग्य के कुछ ज्ञान की, शोभा नहो पेखी ।
विना कुछ ज्ञान के वैराग्य की, महिमा नहो देखो ॥
॥ सकल सुख० ॥ ४ ॥

इसो में इकट्ठे मिलते जहाँ, वो ही सुमारग है ।
पृथक रहते जहा 'चम्पा' तहा दोनो कुमारग हैं ॥
॥ सकल सुख० ॥ ५ ॥

दोहा—गजल

(१४)

अगर परमात्मा के ध्यान, करने की तमन्ना है।
तो करलो ध्यान मूरति का, इसी का ये खुलासा है॥
॥ टेक ॥

राग द्वेष बिन सोहनी, पद्मासन चिद्रूप।
नासा दृष्टि निहार युत, आतम रूप अनूप॥
अनूपम रूप लख जिसका निजातम होत भासा है॥
॥ अगर० ॥ १ ॥

सब जग की प्रतिमा विकट, ज्ञान ध्यान धन हीन।
परमातम प्रतिमा ये ही, निज स्वरूप मे लीन॥
कटै हैं पाप दर्शन से, हृदय आनन्द भासा है।
॥ अगर० २ ॥

याते याका ध्येय कर, ध्यान करो गुणवान।
राग द्वेष मिट जाय सब, पावै पद निर्वाण॥
इसी के ध्यान करने से, करम-गण होत नासा है॥
अगर ०॥ ३ ॥

रागद्वेष अज्ञान ते, चेतन होय अरूज ।
नाश कियो इनको सुजिन, याते जिनवर पूज ।।
जिनो की भक्ति से भविजन, कटै भव वन का वासा है ।।
अगर० ।। ४ ।।

जो तुम चाहो आतमा, निर्मल होय अनूप ।
तो निश दिन सुमिरन करो जिन प्रतिमा सुख रूप
इसी मे थापना जिनकी कहै 'चम्पा' खुलसा[1] है ।।
अगर० ।। ५ ।।

*

---

१ निरासा- ख प्रति

गजल

(१६)

हुकम जिनवानी का हमको, वजाना ही मुनासिब है।
विसन सातो महा दुख कर, हटाना ही मुनासिब है।।
।। टेक ।।

जनम मिथ्यात में इनका, महा परणाम है खोटा।
नही सम्यक्त मे इनका, जताना ही मुनासिब है।।
हुकम० ।। १ ।।

जहा विसनो का सेवन है, तहा सम्यक्त का कहना।
विषय विष खाय कर जीना, न कहना ही मुनासिब है।।
हुकम० ।। २ ।।

नाम के जैन भी, सातो विसन से दूर रहते है।
वृथा सम्यक्त धारी के, वताना ही मुनासिब है।।
हुकम० ।। ३ ।।

अधिकतर पाप प्रकृत्यो का, विसन में वन्ध होता है।
नही सम्यक्त मे उनका, वताना ही मनासिव है।।
हुकम० ।। ४ ।।

किसी आशय न समझे से, वचन का हठ नही 'चम्पा'।।
समझ और सोच कर हठ को, हटाना ही मुनासिब है।।
हुकम० ।। ५ ।।

★

गजल

(१७)

शरण कोई नही जग में, शरण इक है जिनागम का ।
जु चाहो काज आतम का, तो शरणा ल्यो जिनागम का ॥
॥ टेक ॥

जहाँ निजसत्व की बाते, तहाँ सब सत्व का जाते ।
जहाँ शिवलोक की कथनी, तहा डर है नही जमका ॥
॥ शरण ० ॥ १ ॥

इसीसे कर्म नसते है, इसी से भरम भजते है ।
इसी से ज्ञान करते है, विरागी ध्यान आतम का ॥
शरण ० ॥ २ ॥

भला यह दाव पाया है, जिनागम हाथ आया है ।
[1]जनम योही गमाओ मत चहुँ दिशि काल का धमका ।
शरण ० ॥ ३ ॥

जो करना हो सो अब करलो, बुरे कर्मों से कुछ डरलो ।
कहे 'चम्पा' सुनों भाई, भरोसा है नही दमका ॥
शरण ० ॥ ४ ॥

---

१. यह पंक्ति मूल पाठ मे नही है ।

चाल--आई नारि करि सिंगार

(१८)

जिनवानी जग विख्यात सार, कर सुविचार सम्यक्त धार ।
॥ टेक ॥

यह मिथ्यातम को हरनहार, सम्यक् रवि जोति उद्योतकार ।
जिमि बचन किरण फैली विथार, भव जीव कमल बोधन अपार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ १ ॥

वनसघन कुबोध कुठार धार, यह सुमति सुबोध सुधा अपार ।
सब दुरगति दुख सुख देत छार, शुभगति शुचि करत कुमार मार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ २ ॥

चिर पर परणति को देत टार, निज परणति सन्मुख कर विहार ।
मुनिगणधरादि सेवत अपार, जिस गुण गण को नही पारवार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ ३ ॥

वच स्यादवाद मुद्रित सुढार, जिन सप्तभगमय किय प्रचार ।
षट द्रव्य पदारथ नव प्रकार, तिन प्रगट किये गति भेदचार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ ४ ॥

भव जीवन की प्रतिपालकार, जिन आनन प्रगटी जगमभार ।
'चम्पा' ने शरणो लियो विचार, दुख-जलतें माता दे उतार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ ५ ॥

★

चाल—निहालदे

(१६)

अब सुधि लीजे, जननी सरस्वती जी कोई ।
क्यूं लगाई माता वार, शिव सुख दीजे आसा लग रही जी ॥
अब सुधि० ॥ टेक ॥

सुखपूरण दुख चूरणे, जी कोई तुम ही को न लखाय ।
धरि विभाव बहु दुख सहैजी, होजी कोई अब तुम शरण लहाय ॥
अब सुधि ० ॥ १ ॥

तुम जाने विन माता जी कोई, स्वपर विवेक न पाय ।
अब शरणो तुमरो लियो जी, हो जो कोई निज निधि देउ बताय ॥
अब सुधि० ॥ १ ॥

तुमरी भक्ति प्रसाद ते जी, कोई बहुत भये भवपार ।
चरण शरण मैने लियो जो, ए जी कोई अब लो माता उबार ॥
॥ अब सुधि० ॥ ३ ॥

जिनवानी सम जगत मे जी, कोई और हितू नहिं होय ।
सब जग स्वारथ सगो जी, कोई विन स्वारथ नहिं होय ॥
अब सुधि० ॥ ४ ॥

'चम्पा' मन बच काय ते जी ए जी, कोई सेवो मैं दिन रात ॥
परस्वारथ कै कारणै जी कोई जनमि लियो तुम मात ।
अब सुधि० ॥ ५ ॥

गज़ल

(२०)

मिलेंगे कब गुरू हमको, जु साँचे वीतरागी हैं।
जिनों की शान्ति छवि निरखे, विपत सब दूर भागी है॥
॥ टेक॥

धरें तप घोर तन बन जोर, जग में वीर न्यारे हैं।
सहें दुख जो पड़े तन पर, समरसी भावधारे हैं॥
नही कुछ दूसरा अनुभव, निजातम प्रीत लागी है॥
मिलेंगे०॥ १॥

जिनों का ध्येय आतम है, लगी है लौ जहां जिनकी।
नही कुछ खबर बाहर की, सुरति निज में लगी तिनकी।
इन्ही चित ध्यान केवल तें, चिदानंद ज्योति जागी है॥
मिलेंगे०॥ २॥

खडे शत इन्द्र चरणों में, जिनों की आस करते हैं।
देउ निज बोध हमको भी, यही अरदास करते हैं॥
निरख जिस शान्ति मुद्रा को, सहज होते विरागी हैं॥
मिलेंगे०॥ ३॥

कहे 'चम्पा' जिन्होंने काज आतम के सम्हारे है।
जगेंगे भाग हमरे तब मिले, जब गुरु हमारे हैं।
——दरस——कब होयगा जिनका, यही लौ मेरे लागी है॥
मिलेंगे०॥ ४॥

गजल

(२१)

दिगम्बर भेष के धारी विरागी गुरु हमारे हैं ।
जिनो ने मोह तज तन का, निजातम काज सारे है ।
॥ टेक ॥

बडा यह कठिन मारग है, चलैं जिम खडग धारा पर ।
धरे कोइ वीर जग विरले, तजैं कायर परीस्या[1] डर ॥
सहैं दुख जो पडे तन पर, समरसी भाव धारे हैं ॥
दिगम्बर० ॥ १ ॥

विरागी है तो साचे इक, दिगम्बर भेष वारे है ।
विषय का लेश नही जिनके, मदन मद चूर डारे है ॥
बडे है धीर जग सोई, जिन्होने व्रत सम्हारे है ॥
दिगम्बर० ॥ २ ॥

बडा यह सुगम मारग है, निजातम ध्यान धरने को ।
जहा सुध है नहीं तन की, जगत की बात करने को ॥
कहे 'चम्पा' जिनो ने काज, आतम के विचारे हैं ॥
दिगम्बर० ॥ ३ ॥

---

१ परीस्या—परीषह-कषायो को जीतना परीषह कहलाती है ।

रेखता

(२२)

आतम ध्येय बनायो, मुनिवर, आतम ध्येय बनायो।
राग द्वेष सब छाडि ध्यान कर, ताही मे लौ लायो ॥
॥ टेक ॥

तन सम्बध त्याग सब परिग्रह, गिरि वन वास करायो ।
भेष दिगम्बर आस न अवर, कठिन पथ उर लायो ॥
मुनिवर आतम० ॥ १ ॥

याही के बल घोर परीषह[1] सहत न रंच डिगायो ।
हिम सरवर पावस तरुवर तर ग्रीषम गिर सिर धायो ॥
मुनिवर आतम,० ॥ २ ॥

तप के हेत देह कृष कीनो आतम सिद्ध करायो ।
ऐसे गुरु के चरण कमल को 'चम्पा' शीस नवायो ॥
मुनिवर आतम० ॥ ३ ॥

---

१ मूलपाठ—परीस्या।

गजल

(२३)

वे गुरु विरागी कब मिलेंगे, तरन तारन वीर।
सबोध के मोहि देहि दिक्षा, जो मिटै भव पीर ॥
॥ टेक ॥

ससार विषम अपार वन मे, भटकते- बहु काल ।
वीतो अधिक दुख भोगते तहाँ, भारी विपत विशाल ॥
उन दुखन कौ कर चितवन मुझे,- भिदे मरम सरीर ॥
वे गुरु ० ॥ १ ॥

दुख रूप है नही सुध रही कुछ तन लखो निज सोय ॥
ताही सुतन मे मगन है करि विषय सुख मे मोप ॥
भूलो निजातम ज्ञान धन सुख रूप अचल गहीर ॥
वे गुरु ० ॥ २ ॥

वैराग भावन तप उपावन, तै विरचि अकुलाय ।
ससार ही को वीज बोयो, जमी सो दुखदाय ॥
शिव हेत दर्शन ज्ञान चारित तजो दुखं जल तीर ॥
वे गुरु ० ॥ ३ ॥

यो भूल मेरी भई जो कुछ, कहू कहा तक सोय ।
ताही मिटावन, हेत सतगुरु, और नाही कोय ॥
'चम्पा' जगत मे प्रिय वचन ते, हरे जग की भीर
वे गुरु ० ॥ ४ ॥

चाल गीता छंदः

(२४)

धन धन्य है मुनिराज ते, गृह छाडि कर वन को गये।
सब ग्रन्थ तजि निरग्रन्थ के, निज भाव मे रमते भये॥
॥ टेक ॥

गृह जाल अति विकराल विषम अथाह दुख को भर रहे।
इसमे न हित की वात कुछ, छिन २ विपति को सह रहे॥
धन धन्य है० ॥१॥

ऐसी गृहाश्रम की अवस्था, देखि चित विरकत थये।
जिय भूल सकट मे परे, निज रूप तजि पर वश भये॥
॥ धन धन्य ॥ २ ॥

इम चिंतवन कर सब तजे पर ध्यान आतम लग रहे।
ऐसे गुरू तारन - तरन 'चम्पा', धरत सिर धर नये॥
धन धन्य ॥ ३ ॥

हिंसादि पाप अनेक का गृह, काज, अघ मे फस रहे।
ऐसे जन की दशा विकट, निहार निज मे थिर थये॥
धन धन्य ॥ ४ ॥

●

चाल—मल्हार

(२५)

चरण शरण मोहि दीजिये अरज यही महाराज
। टेक० ॥

चिन्तामनि तुम कलपतरु, कामधेनु सुन नाम ।
आयो तुम पद कलपतरु, कामधेनु सुभ भान ॥
कामधेनु अविचल अमृत धन, काया सर्व सुजान ।
आयो तुम ढिग हे प्रभु, हरो विभाव अकाम ॥
चरण० ॥ १ ॥

धरि विभाव बहु दुख लहे, सब तुम जानत सोय ।
फिर फिर धरत विभाव को, कारज केहि विधि होय ॥
चरण ॥ २ ॥

तेरे सुमरन जापते, दुखद विभाव पलाय ।
ताते तेरी भक्ति ही, सब विधि सरन सहाय ॥
चरण० ॥ ३ ॥

मात तात सुत सजन जन, स्वारथ सगे विचार ।
बिन स्वारथ तुमही सगे, और न कोई निहार ॥
चरण० ॥ ४ ॥

भई चाह निज रूप की, सो दीजे जिनराज ।
'चम्पा' चाह न आन की, कीजे मेरो काज ॥
चरण० ॥ ५ ॥

चाल—निहालदे

(२६)

प्रभुजी मोहि पार उतारिये जी कोई मैं डूबत भवपार ।
भक्ति भाव धरि भावना कोई भाऊं द्वादश सार ॥
॥ टेक ॥

देह स्वजन और सपदा, थिर नही दीसत कोय ।
थिर प्रभु तेरी भक्ति है, यातें थिर पद होय ॥
प्रभु० ॥ १ ॥

या ससार असार मे, शरण सहाय न कोय ।
एक तिहारी भक्ति ही, शरण सहाई होय ॥
प्रभु० ॥ २ ॥

जगत जाल दुख कर भरौ, सुख कौ नही लवलेश ॥
आकुलता विन भक्ति तुम, जो सब हरे कलेश ॥
प्रभु० ॥ ३ ॥

एक अकेलो आतमा, निज सुध बुध सब खोय ।
भ्रमत फिरे तुम भक्ति विन, संग न दूजो कोय ॥
प्रभु० ॥ ४ ॥

निज आतम विन और सब, जिते पदारथ आन ।
तुम शासन जाने विना, लिये जो अपने मान ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

देह अशुचि शुचि है नही, शुचि है आतम शक्ति ।
ताके अवलम्वन विषै कारण तुमरी भक्ति ॥
प्रभु० ॥ ६ ॥

विधि आवन कौ हेत है, राग द्वेष अरु योग ।
वीतराग छवि देखि तुम, तिनको होत वियोग ॥
॥ प्रभु० ॥ ७ ॥

दुःख हेत आवत रुके शांति भाव जव होय ।
शाति भाव के करन को दरश तुम्हारो जोय ॥
॥ प्रभु० ॥ ८ ॥

चाह दहै तप होत है, तप ते विधि झर जाय ।
वीतराग तुम चाह विन, निरखत चाह नशाय ॥
॥ प्रभु ॥ ९ ॥

मेरो हितकर लोक मे कोई न दीखे मोय ।
सुख करता तुम ही लखे यातें पूंजू सोय ॥
॥ प्रभु० ॥ १० ॥

दुर्लभ या ससार मे, तुमरो शासन ज्ञान ।
भक्ति तिहारी किये विन, केम मिले भगवान ॥
प्रभु० ॥ ११ ॥

धर्म धर्म सब जग कहे, मरम न जाने कोय ।
धर्म एक निज भाव है, तुम दर्शन तें होय ॥
प्रभु० ॥ १२ ॥

भक्ति भाव प्रभु थुति करी, द्वादश भावन रूप ।
'चम्पा' सफल फली सदा, जी वैराग्य सरूप ॥
प्रभु० ॥ १३ ॥

चाल—तमाखू

(२७)

श्रीजी म्हाने भवदधि पार उतार।
आनदघन अब तारन की वार ॥ टेक ॥

परम शाति मुद्रा लिये जी, वीतराग सुख रूप।
निज आतम लौ लग रही जी, नासा दृष्टि अनूप ॥
श्रीजी० ॥ १ ॥

शाति छवि लखि आपकी जी, शाति रूप हो जाय।
शाति सुख-मई होन को जी, और न कोई उपाय ॥
श्रीजी० ॥ २ ॥

तुम अनेक उपमा घनी जी, आतम लीन अधीन।
और जगतवासी जिते जी, विषयन में लवलीन ॥
श्रीजी० ॥ ३ ॥

आप निकसि जग जाल तें जी, मुकति भये निज टोय।
औरन के दुख हरन को जी, तुम ही समरथ सोय ॥
प्रभु० ॥ ४ ॥

मैं करता मैं भोगता जी, मेरे किये विभाव।
तिसके नासन हेत तुम जी, 'चम्पा' शरन लहाय ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

*

चाल–जमाईं की

(२८)

वेगा तारो जी नाथ मोहि, वेगा तारो जी,
शिवरमणी भरतार ।। टेक ।।

दुख अथाह, सागर पडो जी, भूलो निज सुख सार ।
पर तन को अपनो लखो जी, कोई तातैं भ्रमो अपार ।।
नाथ मोहि० ।। १ ।।

निज सरूप सुधि ना रही जी, कोई ताते भवदधि माह ।
डूबत उछलत फिरत हौ जी, कोई भव जल अगम अथा ह।।
नाथ मोहि० ।। २ ।।

तुम सरूप लखि के धनी जीं, होजी कोई निजपर कियो विचार ।
याते तुम शरना लई जी, होजी कोई अब तुम लेहु उबार ।।
नाथ मोहि० ।। ३ ।।

तुम बचनामृत पानतैं जी, होजी कोई महामोह दुखदाय ।
ताके कुछ उपसम भयो जी, कोई तुम सुधि उपजी आय ।।
नाथमोहि० ।। ४ ।।

तुम सुध उपजत नाथ जी, होजी थिरता भई अपार ।
स्वामी ढील न कीजिये जी, होजी 'चम्पा' जिय की वार ।।
नाथ मोहि० ।। ५ ।।

★

ख्याल—मारवाडी

(२६)

नाथ मेरी अर्जी सुन लेना, नाथ मेरी अर्जी सुन लेना ।
मैं तुम चरणों को दास, नाथ मोहि शिवरमणी देना ॥
॥ टेक ॥

तीन लोक तिहुं काल मे जी, तुम ही हो सिरमोर ।
यातें मैं पायन पडू सु जी, निरखो मेरी ओर ॥
नाथ मेरी० ॥ १ ॥

भवदधि मे डूबत मुझे सु जी, कहीं न पायो पार ।
तुम ज्ञायक लायक प्रभु जी, अब तो लेउ उबार ।
नाथ मेरी० ॥ २ ॥

भवर माहि मैं आगयो सु जी, कोई न सुनै पुकार ॥
'चम्पा' तुमपद गह रही सु जी, जल्दी लेउ निकार ।
नाथ मेरी० ॥ ३ ॥

मैं डूबत अति दीन तुम सुजी दीनन के प्रतिपाल ।
'चम्पा' अर्जी कर रही सु जी, भवदुख तें सु निकाल ॥
नाथ मेरी० ॥ ४ ॥

चाल—निहालदे

(३०)

पूज्य जगत में तुम भये जी, तुम सम और न कोय ।
याते इच्छा में भई जी मम्न सहाई होय ॥
पूज्य जगत० ॥ टेक ॥

सगल परिग्रह छोड़ सही, सकल कियो उपदेश ।
निकल राग अर द्वेष तें निवल भये परमेश ॥
पूज्य जगत० ॥ १ ॥

विगत भयो अर्जी गई, विगत करो जगदीश ।
निर्भयपना तुम में भई, त्रिकाल सकल जगदीश ॥
पूज्य जगत० ॥ २ ।

शान्ति छवि जिन आपकी, पदमासन सुख रूप ।
आसन में सो लग रही, महिमा अधिक अनूप ॥
पूज्य जगत० ॥ ३ ॥

जगत जीव दुख रूप लखि, दियो सु हित उपदेश ।
जगत हितैषी तुम भये, याते पूज्य विशेष ॥
पूज्य जगत० ॥ ४ ॥

तुम आतम हित करत हो, काल अनन्तो जोय ।
पूज्य हितैषी हो तुही और न दूजा कोय ।
पूज्य जगत ॥ ५ ॥

'चम्पा' रीति अनादि यह नाहि सिखावै कोय ॥
अपना विरद सम्हालिये तारन तरन ज होय ॥
पूज्य जगत० ॥ ६ ॥

चाल—मीराबाई

(३१)

करम म्हारो काई करसी जी, म्हारे परमेष्टी आधार ।
॥ टेक ॥

जनक सुता के धीजं कारने अग्नि कुण्ड भयो त्यार ।
सीताजी श्री जिनवर सुमिरे, अग्नि भई जलधार ॥
करम म्हारो० ॥ १ ॥

पवनजय की नारि अ जना, घर तै दई निकालि ।
बनी माहि श्री जिनवर सुमरे, पुत्र भयो बलधार ॥
करम म्हारो० ॥ २ ॥

कलश माहि सासू मिथ्यामत, दीनो साप जु घाल ।
सोमा ने परमेष्टी सुमरे होगई फूल वर माल ॥
करम म्हारो० ॥ ३ ॥

राय दुसासन चीर जू खैंचो भरी सभा मे जोय ।
द्रोपद ने प्रभु तुम पद सुमरे, वढो चीर अति सोय ॥
करम म्हारो० ॥ ४ ॥

जयकुमार गज ग्राह दुष्ट ने पकडो गग मझार ।
तिय सलोचना श्री जिन सुमरे, सती–पति होगये पार ॥
करम म्हारो० ॥ ५ ॥

मैनासुन्दरि राजसुता को, कोढ़ी दीयो व्याह ।
सिद्धचक्र की पूजा कीनी, कञ्चन होगई काय ॥
करम म्हारो० ॥ ६ ॥

सेठानी ने सती चंदना, दई जेल में डाल ।
महावीर के दर्शन कीने, कटी बंध ता काल ॥
कर्म म्हारे० ॥ ७ ॥

इत्यादिक जिन सुमरन सेती संकट कटे अपार ।
'पन्ना' कहत बसो उर मेरे, पंच परम गुरुसार ॥
कर्म म्हारे० ॥ ८ ॥

चाल—मीराबाई

(३१)

करम म्हारो काई करसी जी, म्हारे परमेष्टी आधार ।
॥ टेक ॥

जनक सुता के धीज कारने, अग्नि कुण्ड भयो त्यार ।
सीताजी श्री जिनवर सुमिरे, अग्नि भई जलधार ॥
करम म्हारो० ॥ १ ॥

पवनजय की नारि अजना, घर तैं दई निकालि ।
वनी माहि श्री जिनवर सुमरे, पुत्र भयो बलधार ॥
करम म्हारो० ॥ २ ॥

कलश माहि सासू मिथ्यामत, दीनो साप जु घाल ।
सोमा ने परमेष्टी सुमरे होगई फूल वर माल ॥
करम म्हारो० ॥ ३ ॥

राय दुसासन चीर जू खैंचो भरी सभा मे जोय ।
द्रोपद ने प्रभु तुम पद सुमरे, वढो चीर अति सोय ॥
करम म्हारो० ॥ ४ ॥

जयकुमार गज ग्राह दुष्ट ने पकडो गग मझार ।
तिय सलोचना श्री जिन सुमरे, सती-पति होगये पार ॥
करम म्हारो० ॥ ५ ॥

मैनासुन्दरि राजसुता को, कोढ़ी दीनो ब्याह ।
सिद्धचक्र की पूजा कीनी, कंचन होगई काय ॥
करम म्हारो० ॥ ६ ॥

सेठानी ने सती चंदना, दई जेल में डाल ।
महावीर के दर्शन कीने, कटी असाता काल ॥
कर्म म्हारे० ॥ ७ ॥

इत्यादिक जिन सुमरन सेती संकट कटे अपार ।
'चम्पा' सहुन बसो उर मेरे, पंच परम गुणसार ॥
कर्म म्हारे० ॥ ८ ॥

चाल—बारह मासा

(३२)

सनमति जिन राई, पाँवापुर से मोक्ष लहाईया ।
मोह करम को घात, प्रभु जी कर्म घातिया घाते ।
केवल ज्ञान उद्योत भयो जब, वस्तु सबै लखाईया ।।
।। टेक ।।

समोसरन रचना सुर कीनी, शोभा कही न जाय ।
मानस्थभ अशोक वृक्ष जहा, नाटक साल बनाइया ।।
सनमति० ।। १ ।।

अ तरीक्ष जिनराज विराजै; चौसठ चँवर ढुराईया ।
तीन छत्र त्रिभुवन मन मोहै, भामडल छवि छाइया ।।
।। सनमति० ।। २ ।।

चारतीस अतिशय जुत राजत दोष अठारह नाही ।
अनक्षरी ध्वनि प्रभु की उछरी भबिजिय पुण्य वसाईया
सनमति० ।। ३ ।।

गणधर जी ने झेल जु लीनो द्वादशाग मे गू थि ।
नय प्रमाण निक्षेप आदिकर मोक्ष मारग दरसाइया ।।
।। सनमति० ।। ४ ।।

जोग निरोध जु कियो प्रभु जी शेष अघातिया घाते ।
एक समय बिच मोक्षमहल मे, शिवरमणी को पाइया ।।
।। सनमति० ।। ५ ।।

मे निर्वाण कल्याण आज दिन, उत्सव हर न गमायो ।
इन्द्रादिक सुर असुर सु आये विधि सत्कार कराइया
॥ सनमति० ॥ ६॥

कार्तिक वदि मावस के तड़के, नरनारी मिल आवे ।
अष्ट द्रव्य से पूजा कीनी, लाड़ू दिये चढ़ाया ॥
सनमति० ॥ ७ ॥

धन्य घड़ी अरु धन्य यह वासर, धन्य मात सुखकारी
जैन धर्म जयवन्त जगत में, 'चम्पा' निज हितकारी
सनमति जिन ॥ ८ ॥

दोहा

(४३३)

चम्पा निज कल्याण की जिनके वाछा होय।
जिनवानी के ग्रहण की, करो प्रतिज्ञा सोय॥
करो प्रतिज्ञा सोय, तुम ब्रह्मा तुम विश्नु सिव,
कोई बुद्ध ईस जगदीस।
तुम उपदेश दियो विमल, अंतिम को हित ईस।
॥ टेक॥

होत हितैषी सब जगत, स्वारथ के वश होय।
विन स्वारथ इस जगत मे, सगो न साथी कोय॥
तुम ब्रह्मा० । १॥

पूज्य जगत मे है वही, जो हित करता होय।
विन हित करता स्वारथी, ताहि न पूजै कोय॥
तुम ब्रह्मा० ॥ २॥

विन स्वारथ तुम ही प्रभु, जिय को हित उपदेश।
दिये अनन्ते काल ज्यो, सुख थिर होय विशेष॥
तुम ब्रह्मा ० ॥ ३॥

तुम उपदेश चितारि कै, सुखी होत यह जीव।
यह उपकार कियो बडो, यातै पूज्य अतीव॥
तुम ब्रह्मा ० ॥ ४॥

सव जग देखो टोय के 'चम्पा' जगत मझार।
तुम सम और न दूसरो, सिव सुख को करतार॥
तुम ब्रह्मा ० ॥ ५॥

चाल—इन्द्र नारि करि सिंगार

(३४)

जम्बूस्वामी जिनराई मोहि दर्शन द्यो सुखदाई ।
मन वच तन शीश नवाई, पूजा नित प्रति हरषाई ॥
॥ टेक ॥

नगरी राजगृह मांहीं है, अरहदास सुखदाई ।
तिन घर जन्मे तुम भाई, तज राज मोह वन जाई ॥
जम्बूस्वामी० ॥ १ ॥

तुम बारह भावन भाई, लियो महाव्रत सुखदाई ।
तुम घाति घात दुखदाई, प्रभु केवल लक्ष्मी पाई ॥
जम्बूस्वामी० ॥ २ ॥

भवि जीवन पुन्य कमाई, तुम शिव मारग दरसाई ।
फिर शेष अघाति खपाई, शिव[1] रमणी जाय लहाई ॥
जम्बूस्वामी० ॥ ३ ॥

मथुरा पच्छिम दिस भाई, निर्वाण क्षेत्र तहा जाई ।
'चम्पा' वंदे सिर नाई, तुम चरणों में लौ लाई ॥
जम्बूस्वामी० ॥ ४ ॥

---

१ मोक्ष रूपी लक्ष्मी

चौबोला

(३५)

जिन वचनन की थापना, यह पुस्तक आकार ।
जो जिन की जिन बिंब मे, रंच न भेद लगार ।।
रच न भेद लगार, दुहूं में दोनो ही हितकारी ।
जो माता सरस्वती नही होती अब इसकाल मझारी ।।
जिन प्रतिमा नही प्रगट करे थी शिव मारग सुखकारी ।
पूज्य यातें जग मानी, तरण तारण जिनवानी ।।
जगत मैं सार यही है,
याकी अविनय करैं, भूल से ते जन जैन नही है ।।

चाल—बारह मासा

(३२)

सनमति जिन राई, पावापुर से मोक्ष लहाईया ।
मोह करम को घात, प्रभु जी कर्म घातिया घाते ।
केवल ज्ञान उद्योत भयो जब, वस्तु सबै लखाईया ।।
।। टेक ।।

समोसरन रचना सुर कीनी, शोभा कही न जाय ।
मानस्थभ अशोक वृक्ष जहा, नाटक साल बनाइया ।।
सनमति० ।। १ ।।

अ तरीक्ष जिनराज विराजै, चौसठ चँवर ढुराईया ।
तीन छत्र त्रिभुवन मन मोहै, भामडल छवि छाइया ।।
।। सनमति० ।। २ ।।

चारतीस अतिशय जुत राजत दोष अठारह नाही ।
अनक्षरी ध्वनि प्रभु की उछरी भविजिय पुण्य बसाईया
सनमति० ।। ३ ।।

गणधर जी ने झेल जु लीनो द्वादशाग मे गू थि ।
नय प्रमाण निक्षेप आदिकर मोक्ष मारग दरसाइया ।।
।। सनमति० ।। ४ ।।

जोग निरोध जु कियो प्रभु जी शेष अघातिया घाते ।
एक समय बिच मोक्षमहल मे, शिवरमणी को पाइया ।।
।। सनमति० ।। ५ ।।

ये निर्वाण कल्याण आज दिन, उत्सव उर न समायो ।
इन्द्रादिक सुर असुर जु आये विधि संस्कार कराइया
॥ सनमति० ॥ ६॥

कार्तिक वदि मावस के तड़कै, नरनारी मिल आये ।
अष्ट द्रव्य से पूजा कीनी, लाडू दिये चढ़ाया ॥
सनमति० ॥ ७ ॥

धन्य घड़ी अरु धन्य यह वासर, धन्य साल सुखकारी
'जैन धर्म जयवन्त जगत में, 'चम्पा' निज हितकारी
सनमति जिन ॥ ८ ॥

दोहा

(३३)

चम्पा निज कल्याण की, जिनके वाञ्छा होय।
जिनवानी के ग्रहण की, करो प्रतिज्ञा सोय॥
करो प्रतिज्ञा सोय, तुम ब्रह्मा तुम विश्नु सिव,
कोई बुद्ध ईस जगदीस।
तुम उपदेश दियो विमल, आतम को हित ईस॥
॥ टेक॥

होत हितैषी सब जगत, स्वारथ के वश होय।
बिन स्वारथ इस जगत मे, सगो न साथी कोय॥
तुम ब्रह्मा० ॥ १॥

पूज्य जगत मे है वही, जो हित करता होय।
बिन हित करता स्वारथी, ताहि न पूजै कोय॥
तुम ब्रह्मा० ॥ २॥

बिन स्वारथ तुम ही प्रभु, जिय को हित उपदेश।
दिये अनन्ते काल ज्यो, सुख थिर होय विशेष॥
तुम ब्रह्मा० ॥ ३॥

तुम उपदेश चितारि कै, सुखी होत यह जीव।
यह उपकार कियो बडो, यातै पूज्य अतीव॥
तुम ब्रह्मा० ॥ ४॥

सब जग देखो टोय के 'चम्पा' जगत मझार।
तुम सम और न दूसरो, सिव-सुख-को करतार॥
तुम ब्रह्मा० ॥ ५॥

चाल—इन्द्र नारि करि सिंगार

(३४)

जंबूस्वामी जिनराई मोहि दर्शन द्यो सुखदाई ।
मन वच तन शीश नवाई, पूजों नित प्रति हुलसाई ॥
॥ टेक ॥

नगरी राजगृह मांही है, अर्हद्दास सुखदाई ।
तिस घर जन्मे तुम आई, तज राज छोड़ बन जाई ॥
जम्बूस्वामी ० ॥ १ ॥

तुम बारह भावन भाई, लियो महाव्रत सुखदाई ।
तुम घाति घात दुखदाई, प्रभु केवल लक्ष्मी पाई ॥
जम्बूस्वामी ० ॥ २ ॥

भवि जीवन पुन्य बसाई, तुम शिव मारग दरसाई ।
फिर शेष अघाति खपाई, शिव[1] रमणी जाय लहाई ॥
जम्बूस्वामी ० ॥ ३ ॥

मथुरा पश्चिम दिस भाई, निर्वाण क्षेत्र तहा जाई ।
'चम्पा' वंदे सिर नाई, तुम चरणों मे लो लाई ॥
जम्बूस्वामी ० ॥ ४ ॥

---

१ मोक्ष रूपी लक्ष्मी

चौबोला

(३५)

जिन वचनन की थापना, यह पुस्तक आकार ।
जो जिन की जिन बिंब मे, रंच न भेद लगार ॥
रंच न भेद लगार, दुहू में दोनो ही हितकारी ।
जो माता सरस्वती नही होती अब इसकाल मझारी ॥
जिन प्रतिमा नही प्रगट करे थी शिव मारग सुखकारी ।
पूज्य यातैं जग मानी, तरण तारण जिनवानी ॥
जगत मैं सार यही है,
याकी अविनय करै, भूल से ते जन जैन नही है ॥

चौबोला

(३६)

सुर नर पशुगनि धुनि-गाजी वाणी मेघ गरजत ।
या सम पूज्य न दूसरो याकै आखर युत ॥
याके आखर सत, संत जिन आगम को समझायो ।
ता आगम को अनुभव कर करम वध छिटकायो ॥
सहस छयानवै चतुर नारि मिल जिनको मन न लुभायो ।
नव निधि चौदह रतन छाड़ि जिन अजर अमर पद पायो ॥
पूज्य यातैं जिनवानी, यही मनन मन मानी ।
इसी का ध्यान धरीजे ॥
छोड़ि सकल भ्रम जाल, जासु की नित प्रति पूजन कीजे ॥

चौबोला

(३७)

नित प्रति पूजन कीजिये, महा विनय चितधार ।
विनय सहित लिखवाइये, पढिये विनय विचार ॥
पढिये विनय विचार जासु को विनय धर्म को धारी ।
विनय मूल हैं सब धरमनि को, ये जिनराज उचारी ॥१॥

विनय नसत है पट् धरम गृही के, नास होत अविकारी ।
धर्म नसत अवशेष रह्यो क्या, वुधजन करो विचारी ॥
.. .. अमृत सम ये जान गहीजे ।
जो राखोगे मान तिनो की, सरस्वती वानि भनीजे ॥ २ ॥

卐

चौबोला

(३८)

जो याकी अविनय क्रिया, करै करावै भूल।
ते जैनी जैनी नहीं, जिनमत के प्रतिकूल ॥
जिनमत के प्रतिकूल जिन्हो की, भूल बडी है भारी।
चार ज्ञानधारी गणधर से, याके पूज्य पुजारी ॥१॥

ता माता की विनय लोपनी, क्रिया करे अघकारी।
अ त विपाक विसम है याके, करिये काज विचारी॥
पूज्य की पूजा कीजे, मान तिस को रख लीजे।
कुमति को दूर करीजे॥

यह जिनमत की चाल सदा की, ताको नाहि तजीजे ॥२॥

चौबोला

(३९)

भविक जन तव जिय काज नरेंगे,
विना ग्रहण संसारसमुद्र तें, पार नही उतरेंगे।
याते मन वच काय लाय, चिर यारो नमन करेंगे ॥
तेही लहैं मोक्ष का मारग, नहि निगोद विचरेंगे ॥१॥

दीउ रैन दिन सेवा कीजे, इसी को कंठ धरीजे।
.... जे सुनय वचनामृत पीजे ॥

या विन तिरो न कोय जगत मे, शासन नाव भनीजे।
भविक जन ॥२॥

चाल-गीत मारवाडी

(४०)

जिनवानी माता अरजी तो मेरी सुन लीजिये।
॥ टेक ॥

निपट अयानी चहुगति मे भ्रमतो फिरो।
तुम पास न आयो, तातैं भवसागर परो॥
मैं चहुगति मे ही, काल अनन्त दुख सहे।
इक स्वास मझारी, जनम मरन नव दुख लहे॥
जिनवानी माता० ॥ १ ॥

तेरे विन माता स्व-पर विवेक न मैं लहो।
पर को अपनायो तजि, स्वरूप भ्रम मय गहो ॥
यह भूल हमारी तोहि, दीयो छुट काय कै।
क्या हो पछिताये, काल अनत गमाय कै॥
जिनवानी० ॥ २ ॥

मुझ भूल घनेरी, सगति तेरी ना लही।
गुरु वहु समझायो, तो भी वान वुरी गही॥
अव भाग्य उदय ते, दर्शन तुमरो पाइयो।
दुठ कर्म नसाये, आतम रूप लखाइयो ॥
जिनवानी० ॥ ३ ॥

दर्शन तुमरे तें, निज स्वभाव की सुधि भई ।
पर परणति छूटी, वह सरधा उर दृढ भई ।।
मेरो मन चचल तोहि छोडि इत उत फिरै ।
याही तै माता फिर फिर दुख सागर गिरै ।।
जिनवानी० ।। ४ ।।

तन ही निज मानो, चिद भूलो भ्रम वस पडो ।
तै भेद वतायौ, यह उपकार कियो वडो ।।
उपकार न भूलो, विनय करूं चित लाइ कै ।
मैं पूजू ध्याऊँ, सिंहासन पधराइ कै ।।
जनवानी० ।। ५ ।।

गज छाग भुजगी सिंह स्याल कुकर्ट दुखी ।
जिन जिन तुम सुमरी, तेई भये अनुपम सुखी ।।
तू साची माता दे सव विधि वसु तोडि कै ।
'चम्पा' गुण गावै, अरज करै कर जोडि कै ।।
जिनवानी० ।। ६ ।।

चाल–इन्द्र सभा

(४१)

मैं परणामी परणमू, धरि विभाव पर जन्म ।
याही तैं भव दुख सहू, हेतु न कर्त्ता अन्य ॥
मै परणामी० ॥ १ ॥

करि विभाव पुदगल विषै, लियो विभाव प्रसग ।
तातैं भयो विभाव गुण, सतति रूप अभग ॥
मै परणामी ० ॥ २ ॥

याही तै भव वन भ्रमौ, काल अनतानत ।
यह मेरो अपराध सव, तुम जानत भगवत ॥
मै परणामी ० ॥ ३ ॥

मै करता मैं भोगता, मेरे किये विभाव ।
तिस छेदन उपदेश सुन, तुमरो शरन लखाव ॥
मै परणामी० ॥ ४ ॥

ता विभाव के नास को, तुम कारण जगदीश ।
यातै शरनागति लही, हरि विभाव मुझ ईश ॥
मैं परणामी० ॥ ५ ॥

मैं अपराधी अति विकट, फिर फिर करि अपराध ।
पर विभाव मे फस रहो, छाडत नाहि उपाधि ॥
मैं परणामी० ॥ ६ ॥

दूर करन अपराध को, और न समरथ कोय।
वीतराग तुम एक ही, निरपराध कर सोय ॥
मै परणामी० ॥ ७ ॥

हा हा डूबो जात हूँ धरि विभाव दुख रूप।
मेरे घट निज भाव का, करो प्रकास अनूप ॥
मैं परणामी० ॥ ८ ॥

कहा करू कित जाऊ मैं, सब जग देखो टोय।
जग विभाव मैं फस रहो, कारज किहि विधि होय ॥
मैं परणामी० ॥ ९ ॥

पाय पडत हा हा करत, सरनागत प्रतिपाल।
मुझ विभाव को दूर कर, हे प्रभु दीन दयाल ॥
मैं परणामी० ॥ १० ॥

मुझे दुख वाधा करन को, जो विभाव मुझ लार।
ते सव तुमरी भक्ति तैं, मुक्ति होय दुखकार ॥
मैं परणामी० ॥ ११ ॥

देव अनेक निहारियो, सब विभाव युत भ्राति।
तजि विभाव आतम रचे, तुम विराग छवि शाति ॥
मैं परणामी० ॥ १२ ॥

जो विभाव में फसि रहे, रागद्वेष मल लीन।
निज जन को कैसे करे, निरमल शुद्ध प्रवीन ॥
मैं परणामी० ॥ १३ ॥

यह प्रतीति धरि सब तजै, देव विविध प्रकार।
वीतराग तुम शरन ही, आयो शांति निहार ॥
मैं परणामी० ॥ १४ ॥

कहा करूँ कहां जाऊँ मैं, हे जिनेन्द्र जग ईश ।
मेरे कारज करन को, तुम प्रभु विस्वाबीस ॥
मैं परणामी० ॥ १५ ॥

मैं अशक्ति अति दीन मैं, अधम पतित दुख रूप ।
पतित उधारन तुम छते, मैं डूबत भव कूप ।
मैं परणामी० ॥ १६ ॥

मैं इकलो भव वन विषै, कोइ न शरन सहाय ।
शरन सहायी तुम लखै, लीनी शरना आय ॥
मैं परणामी० ॥ १७ ॥

मेरी अर्ज निहारिकै, कीजे मेरो काज ।
जो विभाव तजि शिव लहो, पाऊँ निज पद राज ॥
मै परणामी० ॥ १८ ॥

धरि विभाव बहु दुःख लहे, सब तुम जानत सोय ।
फिर फिर धरत विभाव को, काज किहि विधि होय ॥
मै परणामी० ॥ १९ ॥

तेरे सुमरण जाप ते, दुखद विभाव पलाइ ।
ताते तेरी भक्ति ही, सब विधि शरन सहाय ॥
मै परणामी० ॥ २० ॥

मात तात सुत सजन जन, स्वारथ सगे विचार ।
विन स्वारथ तुम ही सगे, और न कोई निहार ॥
मैं परणामी० ॥ २१ ॥

भई चाह निज रूप की, सो दीजे महाराज ।
और चाह कुछ ना मुझे, कीजे मेरो काज ॥
मैं परणामी० ॥ २२ ॥

चिन्तामणि तुम कलपतरु, कामधेनु सुन नाम ।
आयो तुम ढिग हे प्रभु, हरो विभाव अकाम ॥
मैं परणामी० ॥ २३ ॥

आप निकसि जग जाल तैं, मुक्त भये निज टोय ।
औरन के दुख हरन को, तुम ही समरथ सोय ॥
मैं परणामी० ॥ २४ ॥

तुम अनेक उपमा धनी, आतम लीन अखीन ।
और जगत वासी जिते, विषयन मै लवलीन ॥
मैं परणामी० ॥ २५ ॥

परम शाति मुद्रा लिये, वीतराग सुखरूप ।
निज आतम लौ लग रही, नासा दृष्टि अनूप ॥
मैं परणामी० ॥ २६ ॥

शाति छवी लखि आपकी, शाति रूप हो जाय।
शाति सुख मई होन को, और न कोटि उपाय ॥
मै परणामी० ॥ २७ ॥

राग द्वेष मल जीय मे, कहत सयाने लोय ॥
तिस ही मल के हरन को, चाहत है सब कोय ॥
मै परणामी० ॥ २८ ॥

मन हरना छवि आपकी, प्रगट अनूप सरूप।
जास लखै सब दुख टरै, राग द्वेप भ्रम कूप।
मै परणामी० ॥ २९ ॥

जो जो तुमरी भक्ति मे, रचे जीव निज टोय।
ते अविनाशी थिर भये, सुख अनत अविलोय ॥
मै परणामी० ॥३० ॥

बार बार विनती करूँ, यदपि दोष पुनरुक्त।
तदपि तुम्हारी भक्ति विन, और न दीखे कोय ॥
मै परणामी ॥ ३१ ॥

या ससार असार मे, भक्ति सहाई होय ॥
भक्ति बिना 'चम्पा' वन भ्रमे, काढ सके ना कोय ॥
मै परणामी० ॥ ३२ ॥

पद

(४२)

प्रभुजी ! तुम आतम ध्येय करो ।
सब जग जाल तने विकलप तजि, निज सुख सहज वरो ।
॥ टेक ॥

हम तुम एक देश के ही वासी, इतनौ ही भेद परौ ।
भेद ज्ञान विन तुम निज जानो, हम विवेक विसरो ॥
प्रभुजी० ॥ १ ॥

तुम निज राच लगे चेतन मे, देह सनेह टरो ।
हम सम्बन्ध कीयो तन धन से, भव बन विपति भरो ॥
प्रभुजी० ॥ २ ॥

तुमरी आतम सिद्ध भई प्रभु, हम तन बन्ध धरो ।
यातैं भई अधोगति म्हारी, भव दुख अगनि जरो ॥
प्रभु० ॥ ३ ॥

देखि तिहारी शाति छवी को, हम यह जान परो ।
हम सेवक तुम स्वामी हमारे, हमहि सचेत करो ॥
प्रभु० ॥ ४ ॥

दर्शन मोह हरी हमरी गति, तुम लख सहज टरो ।
'चम्पा' शर्न लई अब तुमरी भव दुख वेग हरो ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

---

१ मूल प्रति मे धेय पाठ है ।

पद

(४३)

प्रभु श्री अरिहत जिनेस मेरे हित के करतारा है।
जग ढूंढ फिरा किसहू न दिया, नहिं नेक सहारा है॥
श्री वीतराग सरवज्ञ हितैषी साथ हमारा है, मेरी आखो का तारा है।
॥ टेक० ॥

मै पडा अध भवकूप, रूप अपना न सम्हारा है।
तन ही को अपना मान लियो, दुःख द्वद अपारा है॥
प्रभु ० ॥ १ ॥

प्रभु दियौ भेद वतलाय, नही तन जाल तुमारा है।
तुम राग द्वेष वस फसे, चेतना रूप तिहारा है॥
प्रभु ० ॥ २ ॥

अव सव विभाव देउ छोड, तोडि जग मोह पसारा है।
निज ध्येय ध्याय कर सिद्ध होय, तव शिव सुख थारा है॥
प्रभु ॥ ३ ॥

इम प्रभु किरन उद्योत हो, सव जग उजियारा है।
निज तत्व विवेचन होत नसै, भ्रम पथ अधियारा है॥
प्रभु ॥ ४ ॥

ऐसो उपदेश कियो प्रभु ने न कियो परिवारा है।
'चम्पा' हित हेत येही यातैं, सिरदेव हमारा है॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

★

पद

(४४)

अजी महाराजा दीन दयाल, अरज सुन सरनागत प्रतिपाल ।
॥ टेक ॥

एजी निज कारज साधक लखे सजी, तुम गुण अगम अपार ।
एजी मेरी बाधा हरौ प्रभु जी, मैं रही पुकार पुकार ॥
अजी० ॥ १ ॥

एजी कहाँ जाऊ मै, क्या करू सुजी हे जिनेन्द्र जगईश ।
एजी मेरे कारन करन को सुजी, तुम प्रभु विस्वावीस ॥
अजी० ॥ २ ॥

एजी मैं अशक्त अति दीनहू सुजी, अधम पतित दुख रूप ।
पतित उधारन तुम छतै सुजी, मै डूबत भव कूप ॥
अजी० ॥ ३ ॥

एजी मैं इकिली भववन विषै सुजी,
कोइयन सरन सहाय ।
सरन सहाई तुम लखे सुजी, लीनो सरना आय ॥
अजी० ॥ ४ ॥

एजी 'चम्पा' अरजी कर रही सजी कीजे मेरो काज ।
जो विभाव तजि शिव लहु सुजी, पाऊ निज पद राज ॥
अजी महाराजा० ॥ ५ ॥

इसी तरह का पद पहिले ४१ संख्या पर आ चुका है जिसमे २ से ५ तक के अन्तरे प्राय समान हैं ।

चाल–धमाल

(४५)

पारसनाथ हरो भव वास, तुव[1] चरणों की शरण गही ।
॥ टेक ॥

तीन लोक नायक लायक, सव तारन तरन कही ।
भव दुख नासक सुख परकासक ज्ञान विराग मही ॥
पारसनाथ० ॥ १ ॥

तुम गुण अगम अपार, नाथ नहि गणधर पार लही ।
भव जिय कंमल प्रबोधन कारन, अद्‌भुत भान सही ॥
पारस० ॥ २ ॥

विन कारन भवजीव उधारण, तुम सम और नही ।
'चम्पा' तुम यशचद चाँदनी, त्रिभुवन छाय रही ॥
पारसनाथ ॥ ३ ॥

---

१ "दु चरणो की मै शक्ति गही" ऐसाभी पाठ है । मूलप्रति मे दु'ख पाठ है ।

बधाई–पूर्वी

(४६)

प्रभु तुम दीन दयाल वामाजी के लाल सभी के प्रतिपाला जी ।
प्रभु जन्मे है पारसनाथ पुरो जी मेरी आस शरण मे आयाजी ॥
॥ टेक ॥

गर्भ माहि जिन आये रतन वरसाये जी ।
प्रभु षट् मास मझार आनद–धन छाये जी ॥
प्रभु तुम दीन ० ॥ १ ॥

इन्द्र अवधि करि जानी जन्म जिन लीनाजो ।
प्रभु जी मेरु सिखर लै जाय न्हवन सुर कीना जी ॥
प्रभु तुम दीन० ॥ २ ॥

वारह भावना भाय अथिर जग जान्यो जी ।
प्रभु जी त्याग्यौ है राज समाज महाव्रत धार्योजी ॥
प्रभु तुम दीन ० ॥ ३ ॥

सुकल ध्यान धरि धाति घातिया सारे जी ।
केवल लक्ष्मी पाय भव्यजन तारे जी ॥
प्रभु तुम दीन० ॥ ४ ॥

शेष अघातिया घाति वरी है शिव[1] नारि मुक्ति पद लीयो जी ।
'चम्पा' की अरदास, पुरौ जी मेरी आस, अभय पद दीजो जी ॥
प्रभु तुम० ॥ ५ ॥

---

१ मोक्ष रूपी लक्ष्मी

पद

(४७)

महावीर स्वामी, अबकी तो अर्जी सुन लीजिये ।
अतिवोर वीर तुम सनमति दीजिये ॥
॥ टेक ॥

त्रिजग ईस जे सनमुख आये, तेसब एक छिनक मे ढाये ।
एसो वीर काम भट ताको तुम सनमुख वल छीजिये ॥
महावीर स्वामी० ॥ १ ॥

परिग्रह छाडि वसे वन माही, निज रुच वाहर की सुधि नाही ।
सिद्ध कीयो आतम वल तप तै, चार करम रिपु खोजिये ॥
महावीर स्वामी० ॥ २ ॥

जब तुम केवल ज्ञान उपायो, देश देश उपदेश सुनायो ।
कियो कल्याण सवही जीवन को, हम हू कू सुख दीजिये ॥
महावीर स्वामी० ॥ ३ ॥

पावापुर तै मोक्ष सिधारे, कार्त्तिक वदि मावस सुखकारे ।
अष्ट कर्म रिपु वश उजारे, काल अनत ते जीजिए ॥
महावीर स्वामी० ॥ ४ ॥

वह दिन आज भयो सुखकारी, आनद भयो सकल नरनारी ।
लाडू से करि पूजा थारी, 'चम्पा' निज रस पीजिए ॥

गजल

(४८)

जिनो का लक्ष है जिनवर, वही परमात्मा होगे ।
निरतर लौ लगी निज मे, वही धर्मात्मा होगे ॥
॥ टेक ॥

जिनो का लक्ष है पर धन, वे ही तस्कर कहाते है ।
वसी चित माहि पर नारी, वही अधर्मात्मा होगें ॥
जिनो का० ॥ १ ॥

खेलते गजफा शतरज, वे ही ज्वारी कहाते है ।
पराये प्राण हरते है, वही पापात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥ २ ॥

नगर की नारि मे चितधर, भखे मद मास जे मूरख ।
लगाया लक्ष उनमे जो, वही नरकात्मा होगें ॥
जिनो का० ॥ ३ ॥

जिनो का ध्येय जैसा है, विसन वैसा ही होता है ।
जिनो का लक्ष है आतम, वही अन्तरात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥ ४ ॥

भविक जन लक्ष आतम का, स्व वस क्यो नही बनाते हो ।
बनाते जो नही 'चम्पा' वहो बहिरात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥५॥

★

गजल

(४६)

श्री जिनराज की पूजन मुबारिक हो मुबारिक हो ।
जिसे करते है सुरपति मिल, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
॥ टेक ॥

हुवा है जैन पद्धति से, श्री जिन-चक्र का पूजन ।
बहुत आनन्द उर छाया, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ १ ॥

जन्म उत्सव विवाहादिक, जिनो के आदि मे भविजन ।
करे है प्रेम से पूजन, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ २ ॥

सकल दुख हरन मगल करन, यह शिवराज का पूजन ।
सदा यह भव्य जीवो को, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ ३ ॥

बडे अज्ञान से हमने, करी मिथ्यात की बाते ।
तजी है जैन शासन सुन, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ ४ ॥

सर्व सज्जन सुजन परिजन, प्रजा और देश के राजन ।
कहे 'चम्पा' इनो को, ये मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ ५ ॥

चाल–मरहठी

(५०)

श्री जिनमदिर जा करि भविजन आतम हित करना चहिऐ।
जगत के घद को छोड कर, पापो से डरना चहिए ॥
टेक ॥

जिनवर अरचा आगम चर्चा, कठ पाठ करना चहिये।
दुर्लभ समय पाय कर ताहि, ना विसरना चहिये ॥
श्री जिन० ॥ १ ॥

सामायिक गुरु भक्ति श्रेष्ठ आचरण सदा चरना चहिए।
तजि कुसग सुगति माहि, सदा पडना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ २ ॥

कठिन कठिन यह औसर पाया, इससे नही टरना चहिए।
चला जाय जव मिलै ना फेर, यह सुमरना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ ३ ॥

तन धन सुजन हेत, नही निस दिन महापाप करना चहिए।
इसके कारण समझ क्या, भव भव दुख भरना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ ४ ॥

रैन दिवस तुम करो कुचर्चा, अब तो यहा डरना चहिए
करो सुचर्चा गहो निज 'चम्पा, पर हरना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ ५ ॥

मूल पाठ मे कुचर्चा है।

चाल—मरहठी

(५१)

सम्यक् दर्शन सार जानकर, इसे ग्रहण करना चहिये।
मिथ्याद्रग अंधकार मानकर, इसको पर हरना चहिये ॥
॥ टेक ॥

सुगुरु सुदेव सुधर्म परख, इनका शरना धरना चहिये।
कुदेव कुगुरु कुपथ ग्रथ लखि, इनसे थर हरना चहिये।
॥ सम्यक्दर्शन ॥ १ ॥

सप्त विसन का त्याग प्रथम ही, सम्यक् पद धरना चहिए।
इन सेवन ते चतुरगति दुख को, नहीं भ्रमाना चहिए ॥
॥ सम्यक्दर्शन० ॥ २ ॥

षट् अनायतन तीन मूढता, वसु मद मल हरना चहिए।
शकादिक वसु दोष टाल गुण, आठ सदा चरना चहिए ॥
॥ सम्यक् दर्शन० ॥ ३ ॥

सप्त तत्व षट् द्रव्य पदारथ नव अनुभव करना चहिए।
'चम्पा' तजि विकल्प सब जिय के, दर्शन अनुसरना चहिए ॥
॥ सम्यक् दर्शन० ॥ ४ ॥

*

गजल

(५२)

मनुष भव पाइकै दुर्लभ, वृथा तुम क्यो गमाते हो ।
करो सरधान आतम का, भवोदधि पार जाते हो ।
॥ टेक ॥

बडे सुर असुर पति जग मे, इसी की चाह करते है ।
जन्म नर कब मिले हमको, इसी की आस धरते है ॥
सहज मे आ मिला तुमको, इसे अब क्यो विताते हो ॥
मनुष भव ० ॥ १ ॥

इसी मे सकल सयम है, जिसे धर मोक्ष जाते है ।
इसी मे क्षपक श्रेणी चढ, करम गण को खपाते है ॥
इसी मे सुगति का मारग, इसे तुम क्यो हटाते हो ॥
मनुष भव० ॥ २ ॥

करो अरचा जिनेसुर की, धरो चरचा निजातम की ।
कठिन यह दाब पाया है, करो सरधा जिनागम की ॥
घडी जाती करोडो की, बहाना क्यो बनाते हो ॥
मनुष भव० ॥ ३ ॥

भरोसा स्वास का क्या है, अभी आया नही आया ।
तुझे करना है सो करले, जगत मे थिर नही काया ॥
चला जब जायगा अवसर, भला क्या फेर पाते हो ।
मनुष भव० ॥ ४ ॥

मिला यह काकताली ज्यो न चूको हे मेरे भाई ।
सभलने का समय आया नही कीजे जु सिथलाई ॥
कहै 'चम्पा' अगर चूको तो फिर भव धार जाते हो ॥
मनुष भव ॥ ५ ॥

गजल

(५३)

अजब इस काल पचम मे, रुका है मोक्ष मारग क्यो ।
बताना है मेरे भाई, रुका है मोक्ष मारग क्यो ॥
॥ टेक ॥

ज्ञान सम्यक्त अरु वैराग्य, ये सब मोक्ष मारग है।
रहे जब इकठे हो कर, तभी ये मोक्ष मारग है ॥
जिनोने ये नही जाना, पकड एकांत को बैठे ।
किसी ने ज्ञान को धारा, कोई चारित्र मे पैठे ॥
सभी मिल काज करते है, सम्हाला एक मारग यो ॥
अजब० ॥ १ ॥

जिनो के ज्ञान मन भाया, तुरत वैराग्य छुटकाया ।
लखा सब जगत को त्रणवत, बडे पुरुषो को भरमाया ॥
पढे व्याकरण पिंगल के, भिषक अरु न्याय कविता भी ।
भये पडित बडे ज्ञानी, न छोडी नेक सठता भी ॥
फसे पड़कर कषायो मे ल्यो इक[1] ज्ञान मारग यो ॥
अजब० ॥ २ ॥

धरे जो सात विसनो को, बडे पडित हुये तो क्या ।
करे जो काम नीचो के, बड़े ज्ञानी हुये तो क्या ॥
वही पडित वही ज्ञानी कुविसनो से बचा हुआ ।

---

१ रुल्यो इक मोक्ष मारग यो ऐसा भी पाठ है

नहीं उत्तम नहीं है तृष्ण, आतम में रमा हुआ ॥
बिना वैराग्य के धारे, अकेला ज्ञान मारग क्यों ।
अजब० ॥ ३ ॥

कोई वैराग्य धारन कर, भये उनमन्त में डोलें ।
नगन करके जगत को देखि, मधुरी वाक से बोलें ॥
कहाते नाम त्यागी, ब्रह्मचारी भी कहाये हैं ।
कमंडल और पीछी कर लंगोटी भी लगाते हैं ॥
नहीं शुद्ध ज्ञान आतम का निरा वैराग्य मारग यों ।
अजब० ॥ ४ ॥

करे नहीं ज्ञान आतम का, बड़े त्यागी हुए तो क्या ।
वही त्यागी वही तपसी, अभीक्षण ज्ञान को धारे ।
बिना शुद्ध ज्ञान के धारे, निरा वैराग्य धारण यों ॥
अजब० ॥ ५ ॥

सुनो जिन काल में ज्ञानी पुरुष वैराग्य धारेंगे ।
विरागी भी निरंतर ज्ञान का मारग विचारेंगे ॥
अवस्था होयगी ऐसी, खुलेगा मोक्ष मारग तब ।
बड़ा दुरभाग्य आया है, पृथक मारग हुये हैं अब ॥
भला 'चम्पा' पहुप गूंथे, बिना प्रिय माल सारन जो० ॥
अजब० ॥ ६ ॥

गजल

(५४)

कहा से आये हो चेतन, कहा को होयगा जाना ।
पथिक जन सोच कर मन मे, मुझे यह बात बतलाना ॥
॥ टेक० ॥

मेरा है वास साधारण, जहा नहिं स्वास भर जीना ।
दुखो से तडफडाता मैं, तहा से निकसि चल दीना ॥
असख्याते नगर घूमा, मगर रचना से पहचाना ॥
॥ कहा से० ॥ १ ॥

कहाँ तक दुख कहू अपना, मैं कर्मोका सताया हूँ ॥
सो तुम ज्ञान मे सारी, जवा से कह न सकता हू ।
कहो स्वामी करू मै क्या, मुझे कुछ सुहित जितलाना ॥
कहाँ से० ॥ २ ॥

गुरू उपदेश देते हैं, नगर निज मान पर लीना ।
नगर तुमरा निजातम है, तिसै तुम छोड क्यो दीना ॥
लखो तुम नगर अपने को, करो उस ही मे निज थाना ॥
॥ कहा से० ३ ॥

बिना दृग ज्ञान चारित्र के नही निज थान पाओगे ।
सम्हालोगे नही आये, जहा से आये वाही जाओगे ॥
ये ही उपदेश श्री गुरु का, भला 'चम्पा' के मन माना ॥
॥ कहा से० ॥ ४ ॥

ग़ज़ल

(५५)

करो निरधार आतम का, जु चाहो काज आतम का ।
विना निरधार आतम के, न पाओ राज आतम का ॥
॥ टेक ॥

लखी यह देह आतम ही, इसी मे सुधि गई थारी ।
फसे तन जाल मे निस दिन, गई सब चेतना मारी ॥
समय आया है चेतन का, चितारो साज आतम का ।
करो निरधार० ॥ १ ॥

विना सुविचार इसके से, अनन्ते काल वीते है ।
रचे पर सग मे मूरख, निजातम वोध रीते है ॥
अभी चेतो सयाने तुम, धरो सिरताज आतम का ।
करो निरधार० ॥ २ ॥

चेतना रूप है तुमरा, न वर्णादिक तुम्हारे है ।
कर्म का जाल तन अन्तर, न रागद्वेष थारे है ॥
सबो से भिन्न लखें चम्पा, करो हित काज आतम का ।
करो निर० ॥ ३ ॥

पद

(५६)

जिय मत खोवे दिन रैन, जैन मत कठिन कठिन पायो
॥ टेक० ॥

काल अनन्त भ्रमण चिर कीना, राग द्वेष वस भये मलीना ।
यही मैल चेतन में चीना, दूर करन के काज,
जैन मत माहि, भाव पद पद मैं दरसायो ॥
जिय मत० ॥ २ ॥

और अनेक विकट मत धारे, रागद्वेष कामादिक वारे ।
तत्व एक द्वय आदि विचारे, तिन चितवत भयो हीन ॥
देह मे लीन, नही कुछ आतम दरसायो ।
जिय मत० ॥ ३ ॥

'चम्पा' भाग उदय अव आयो, ज्ञानी जन ऋषि गण मन भायो ।
जैन रतन चितामणि पायो, धारो जतन विचार ॥
सजन उरसार, कोश धरि मति छुटकायो ।
जिय मत० ॥ ४ ॥

★

पद

(५७)

नहि कियो तत्व सरधान, हटै किम मिथ्यामति भारी ।
॥ टेक ॥

आपा-पर का भेद न जाना, पर परणति ही मे रत माना ।
निज परणति को छोडि, करी तै दुरंगति की त्यारी ॥
नहि कियो० ॥ १ ॥

आस्रव बंध किया मन माना, सवर निर्जर भूल अयाना ।
आकुलता विन शिव सुख में, विपरीति बुद्धि धारी ॥
नहि कियो० ॥ २ ॥

जैन धर्म का मर्म न जाना, मिथ्यामत मे हुआ दीवाना ।
ताही के मद होय, करी तैं आतम ख्वारी ॥
नहि कियो० ॥ ३ ॥

देव शास्त्र गुरु पूज न जाना, जिन सिद्धान्त विनय नही ठाना ।
'चम्पा' कर सरधान अरे नादान, मिटै जो[1] भव भ्रमना भारी ॥
नहि कियो० ॥ ४ ॥

---

१ भव भ्रमण धारी ऐसा भी पाठ है ।

गजल

(५८)

चेतन सरूप तेरा तू अचेतन होरहा है ।
भ्रम मोह की शराब पी नशे मे सो रहा है ॥
॥ टेक ॥

निजरूप को विसार के पर रूप मे फसा ।
हिंसादि पाप कर तू, दुख बीज बो रहा है ॥
चेतन० ॥ १ ॥

सुत मात तात तरुणी, धन धान्य धाम जे है ।
इन के अर्थ अनेक, पाप भार ढो रहा है ॥
चेतन० ॥ २ ॥

सवही सगे गरज के, तेरे न काम आवै ।
अव चेत तू सयाने, कहा वाट जो रहा है ॥
चेतन० ॥ ३ ॥

मानुष जनम को पाकै, 'चम्पा' सुधारिये ।
दुर्लभ मिला है वक्त, क्यो अजान खो रहा है ॥
चेतन० ॥ ४ ॥

★

गजल

(५६)

चिदानद सोचे मन माही, यहा कहो कौन है तेरा ।
वृथा तन जाल में फसकर, हुआ है मोह का चेरा ॥
॥ टेक ॥

हुआ बस मोह के ऐसा कि, सब सुधि बुधि नसाई है ।
निजातम भूल कर मोदू, लगन तन मे लगाई है ॥
नही है तन जहा तेरा, वृथा तू क्यो कहे मेरा ॥
चिदानद० ॥ १ ॥

सजन धन धान्य पट भूषण, सभी तेरे विजाती है ।
बुरा यह देह मल पुतला, नसत नही वार आती है ॥
समझ अब सुथिर कर मन मे, तुझे अब 'कौन ने घेरा ॥
चिदानद० ॥ २ ॥

सुता सुत मात पितु भाई, जिनो की आस करता है ।
सगे सव गरज के साथी, कोई नही धीर धरता है ॥
कहै 'चम्पा' निजातम लख, करो फरफद सुरझेरा ॥
चिदानद० ॥ ३ ॥

पद

(६०)

दिन यो ही बीते जाते है, दिन यो ही बीते जाते है।
जिन के हेतु पाप बहु कीने, ते कुछ काम न आते है॥
॥ टेक ॥

सजन सघाती स्वारथ साथी, तन धन तुरत नसाते है।
दुख आये कोई होय न सीरी, पाप तेरे लिपटाते है॥
दिन यो ही० ॥ १ ॥

कुकथा सुनत प्रेम बहु बाढे, सुकथा सुन मुरझाते है।
सप्त विसन सेवन मे मुखिया, क्यो कर समकित पाते है।
दिन यो ही० ॥ २ ॥

धन को पाय मान के वसि है, मस्तक विकट उचाते है॥
जब जम आय करै घर वासा, तव अति ही पछिताते है॥
दिन यो ही० ॥ ३ ॥

क्रोध मान छल लोभ काम वश, नाना भेष बनाते है।
ऐसे नर भव पाय गमावत, फिर क्या यह विधि पाते है॥
दिन यो ही० ॥ ४ ॥

जिनवर अरचा आतम चरचा करत न मन हरषाते है।
'चम्पा' सोच भजो जिनवर पद, नातर गोते खाते है॥
दिन यो ही० ॥ ५ ॥

पद

(६१)

यहा कोइ है नही तेरा, फसा क्यो मोह के फन्दे
तुझ कुछ सूझता भी है, दृगन से देख जग खन्दे ॥
॥ टेक ॥

जहा सुत सुता हित भ्राता, पिता नही काम आते है।
सभी स्वारथ सगे तेरे, विपति मे भाग जाते है।
अकेला ही तडफता है, पडा जग कूप के धधे ॥
यहा कोई० ॥ १ ॥

कदा कल्याण तू चाहे तो, फिर इस बात को सुनले।
तेरा तू ही सहाई है, निजातम ध्यान को करले।
करो रुचि ज्ञान अरु थिरता, चिदानद बीच तन मन दे ॥
यहा कोई० ॥ २ ॥

तोड कर मोह दुख दाई, छोड कर वास वन करले।
क्रोध मद मोह माया हास्य, आदिक भाव को हरले॥
नगन आचार साचा यह, यती का भार धर कन्धे ॥
यहा कोई० ॥ ३ ।

शुभाशुभ भाव को करके, करम का वध करता है।
शुद्ध परणाम को करले, करम गण हाल झरता है।
मिला है जोग सब 'चम्पा' रुचो निज छोड सब धंधे ॥
यहा कोई० ॥ ४ ॥

चाल—होली

(६२)

चेतन क्यो कुभेष वनावो, ज्ञान विना दुख पावो ।
॥ टेक ॥

जो कोई भेष धरो शिव कारण, तो अव ज्ञान वढावो ।
छाडि सकल जग धध सयाने, तो ज्ञान कथा चित लावो ॥
॥ चेतन० ॥ १ ॥

शासन वाचन प्रछन भावन योही काल गमायो ।
जव वैराग सफल हो जावे तो ज्ञान हृदय मे लावो ॥
॥ चेतन० ॥ २ ॥

[1]धर वैराग्य नव ग्रीवक लो पहु च वृथा भरमावो ॥
... .
॥ चेतन० ॥ ३ ॥

ज्ञान समान न आन जगत मे आतम को सुख गावो ।
या विन भेष अनेक धरे फिर कुछ भी सार न पावो ॥
॥ चेतन० ॥ ४ ॥

कोट वात की वात यही है जो वैराग वढावो ।
आतम ज्ञान उपावन विधि कर 'चम्पा' शिव मग ध्यावो ॥
॥ चेतन० ॥ ५ ॥

---

१ ३ रे पद की एक पक्ति नहीं है

चाल—होली

(६३)

चतुर चित चेतो रे भाई, कहा सुध बुध विसराई।
।। टेक ।।

काल अनंत वसो साधारण तहा, कुछ सुध न रहाई।
एक स्वास मे अठदश विरिया, जामण मरण लहाई ।।
निकसि थावर थिति पाई ।। चतुर० ।।

त्रस पर्याय दु.ख भोगे सो, जानत जिनराई।
पशु नारक सुर पदवी लह कर, कष्ट अनेक लहाई ।।
कहू समता न गहाई० ।। चतुर० ।। २ ।।

दुर्लभ तै दुर्लभ लहै, जिनमत सुकुल सुभाई ।
पाय ताहि निरफल मत खोवो, निज आतम रुचि लाई ।।
ये ही समकित सुखदाई० ।। चतुर० ।। ३ ।।

चेतन को कर लक्ष्य सयाने, आन लक्ष्य छुटकाई।
सिद्ध होयगो तब ही आतम, नातर दुःख अधिकाई ।।
।। चतुर० ।। ४ ।।

चाल—होली

(६४)

सजन चित चेतो रे भाई ०॥ टेक ॥

अष्टान्हिका पर्व प्रोपध दिन, चतुरदशी सुखदाई ।
उत्तम पुरुष धर्म साधन कर, नर भव सफल कराई ॥
भूल तुम धूल उडाई ॥ सजन० ॥ १ ॥

अनगाले जल भरि पिचकारी, छोडत मन हरसाई ।
अशुचि महा धरि कीच हाथ मे, पर मुख करत मलाई ॥
कहा सुध वुध विसराई ॥ सजन ० ॥ २ ॥

प्रथम करत उपहार उपानत,[1] फिर मिल हार डराई ।
कालो मुख रासभ[2] असवारी, आगे ढोल वजाई ॥
गाल मुख वकत अथाई ॥ सजन ० ॥ ३ ॥

भग पिये मद भोये चेतन, कहा गई चतुराई ।
तीन भुवन पति सकति होन की, सारी रीत गवाई ॥
सीख कहा सीखे जाई ॥ सजन० ॥ ४ ॥

याते विरचि धर्म गहि लीजे, सतगुरु सीख सुनाई ।
यह अवसर फिर मिलन कठिन है, कहै 'चम्पा' हित लाई ॥
सजन चित चेतो रे भाई ० ॥ ५ ॥

---

१ जूता । २ गधा

*

चाल–होली

(६५)

जरा चित चेतो रे भाई, यह चेतन की बार ॥
टेक ॥

मन को ज्ञान भयो नही तुमरे, काल अनत गमायो ।
तहा सीख को काम कहा है, विरथा काल वितायो
कठिन मानुष गति पाई ॥
जरा चित० ॥ १ ॥

सीख जोग बुधि भई है तिहारी योग मिलो सब आई ।
अब गुरु सीख सुधारस पीजे, नातर दुख चिरथाई ॥
भूल करनी नहि भाई ॥
जरा चित० ॥ २ ॥

समकित ज्ञान चरन शिव मारग जिनवर ताहि वताई ।
है प्रधान गुण तिन मे समकित आतम रुचि सुखदाई ॥
ताहि 'चम्पा' चित लाई
जरा चित० ॥ ३ ॥

धमाल

(६६)

दृगधारी की चाल निराली है, निराली है ।
मतवाली है ॥ टेक ॥

दुख कारण ते डरे निरतर, दुख आये वलशाली है ।
दृगधारी ० ॥ १ ॥

सुख चाहे न करे सुख कारण, उपवन मे जिम माली है ।
दृगधारी ० ॥ २ ॥

जग जन घात करत नही सकित, यह सवजिय प्रतिपाली हे ।
दृगधारी ० ॥ ३ ॥

तन कारज मे सदा उदासी, आतम जोति उजाली है ।
दृगधारी० ॥ ४ ॥

'चम्पा' जिय तन मिले नीर पय, याको सुमति मराली है
दृगधारी० ॥ ५ ॥

चाल–होली

(६७)

मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
॥ टेक ॥

पर परणति तजि, निज परणति गहि ।
ऐजी विसरी निज निधि कब पाऊँ ॥
मैं कब० ॥ १ ॥

कब गृह वास उदास होय मैं ।
ऐजी परिग्रह तजि कर बन जाऊँ ॥
मैं कब० ॥ २ ॥

[1]कब पदमासन ध्यान करूँ मैं ।
ऐजी का दिन आतम लौ लाऊँ ॥
मैं कब० ॥ ३ ॥

राग द्वेष तजि इन्द्रिय गण वश ।
ऐजी समरस में पग जाऊँ ॥
मैं कब० ॥ ४ ॥

'चम्पा' विधि परिहार करूँ जब ।
ऐजी तब ही शिव रमणी पाऊँ ॥
मैं कब० ॥ ५ ॥

---

१ "पदमासन कब ध्यान धरूँ मैं" ऐसा भी पाठ है ।

चाल-होली

(६८)

समकित विन गोता खावोगे ।
दर्शन विन गोता खावोगे ॥
॥ टेक ॥

या विन ज्ञान चरण व्रल शिव नही ।
ग्रैवक लौ चढ जावोगे ॥
समकित विन ० ॥ १ ॥

तन धन कारण लगे रैन दिन ।
तिन मे चैन[1] न पावोगे ॥
समकित० ॥ २ ॥

मिथ्यादृग वस काल अनन्ते ।
भरमे और भिरमावोगे ॥
समकित ० ॥ ३ ॥

नरभव सुकुल धर्म सत सगति ।
मिलो न ऐसो पावोगे ॥
समकित ० ॥ ४ ॥

---

१ 'चेतन' ऐसा भी पाठ है ।

कोटि उपाय वनाय गहो अव ।
नातर वहु पछितावोगे ॥
समकित ० ॥ ५ ॥

तत्व विवेचन जिन वच शरधा
कारण समकित भावोगे ॥
समकित ० ॥ ६ ॥

निश्चय समकित निज आतम रुचि ।
'चम्पा' ताहि वढावोगे ॥
समकित० ॥ ७ ॥

★

चाल—देश

(६९)

चेतो ना सुज्ञानी प्राणी ज्ञान थारा रूप।
पर सग लाग प्राणी ,भले सुख रूप ॥
॥ टेक ॥

पूरन गलन यो छै जड को विरूप ।
याके सग राचे प्रानी किये वहु रूप॥
॥ चेतो० ॥ १ ॥

तन—धन—यौवन ये अथिर कुरूप ।
यांके सग राचे प्राणी किय वहु रूप
॥ चेतो० ॥ २ ॥

मात तात सुत मित्र नारी छै अनूप ।
एतो थानें जगत मे नचाये नट रूप
॥ चेतो०॥ ३ ॥

दर्शन ज्ञान थेतो चेतना सरूप ।
अजर अमर थे छो अचल अरूप
॥ चेतो० ॥ ४ ॥

'चम्पा' तो कहे छै ताको रूप है अनूप ।
क्यो निज निधि देखो थे छो जग भूप
॥ चेतो० ५ ॥

चाल–देश

(७०)

चेतन प्यारे आजा म्हारे देश।
॥ टेक ॥

सुख को थान स्व घर तजि कीनो, क्यो पर घर परवेश।
होत कलेश नरेशन को भी, जो पहुचे परदेश॥
॥ चेतन० ॥ १ ॥

तुमरी परणति मैं शुभचितक, मुझ से रीति न लेश।
सात प्रकृति जो मेरी वैरिन, तिन सो प्रीति विशेष॥
॥ चेतन० ॥ २ ॥

इन की सगति जब लग तेरे, तब लग मिथ्या वेष।
ताके होत ज्ञान व्रत सारे, निस्फल काम कलेश,।
॥ चेतन० ॥ ३ ॥

इति निगोद तै ग्रीवक लो चढि, कीनो भ्रमण अशेष।
तै मुझ विन थिर रूप निराकुल, पद न लियो अमरेस॥
॥ चेतन० ॥ ४ ॥

धरि सरधा आतम रुचि कीजै, ये ही तुमारो भेष।
यही हमरो देश गहो किन, 'चम्पा' हित उपदेश॥
॥ चेतन० ॥ ५ ॥

चाल—कव्वाली

(७१)

विसन सातो ये दुखदाई, हटाना ही मुनासिव है।
हुकम जिनराज का सब को, बजाना ही मुनासिव है ॥
॥ टेक ॥

धर्म सम्यक्त दर्शन है, ये ही है मोक्ष की पैडी ।
जतन कर कर इसे चित मे, समाना ही मुनासिव है ॥
विसन ० ॥ १ ॥

अनते काल से जियने, विसन सातो ही सेये हैं।
विरोधी आत्मा को ये, जताना ही मुनासिव है ॥
विसन० ॥ २ ॥

फसे उपयोग इनमे जब, नही सम्यक्त्व रहती है।
कहे 'चम्पा' इनो को अब, मिटाना ही मुनासिव है ॥
विसन० ॥ ३ ॥

卐

चाल–कव्वाली

(७२)

चेतन तू विसनो को तजता नही, तुझे दुर्गति का खोफो खतर ही नही ।
तू त्याग सही अरे मान कही, तुझे नर्को के दु.ख की खबर ही नही ॥
टेक० ॥

जुवा खेल के द्रव्य नसा जो दिया, विना दाम के तेरी कदर ही नही ।
तेरी प्रीत प्रतीत जु जाती रही, इस जुवे से बाज तू आता नही ॥
चेतन० ॥ १ ॥

पर प्राणो का घात किया सो सही, इस पाप के त्रास को सहेगा तूही ।
अरे वेश्या से प्रीति लगा जु लई, तैने पाप की पोट को सिर पै गही ॥
चेतन० ॥ २ ॥

तैने चौरी करी वहु विपति भरी, परनार हरी ये अनीति करी ।
मद मास को खाके बौराया सही, तुझे मात त्रिया की खबर भी नही ॥
चेतन० ॥ ३ ॥

यह सातो विसन दुख दाय मई, इनका सग भूल के कीजे नही ।
कहै 'चम्पा तजो इनको जु सही, तुझे दुर्गति मे ले जावे यही ॥
चेतन० ॥ ४ ॥

★

पद

(७३)

चलना जरूर होगा, करना है ताहि कर लो।
उठ के प्रभात निस दिन, जिन राज को सुमरलो ॥
॥ टेक ॥

सम्यक स्वभाव सुचि जल, भरना है ताहि भरलो।
यह सप्त विसन पावक, जरना है ताहि जरलो
॥ चलना० १ ॥

खोटे कुसग सेती, डरना है ताहि डरलो।
मिथ्या जहर खाकर, मरना है ताहि मरलो
॥ चलना० २ ॥

ससार दु:ख सागर तिरना, है ताहि तिरलो।
दृग ज्ञान चरन शिव मग, धरना है ताहि धरलो
चलना० ॥ ३ ॥

निज परणति शिव रमणी, वरना है ताहि वरलो।
'चम्पा' समय न चूको, जिनवानी को उचरलो
॥ चलना० ४ ॥

★

गजल

(७४)

कुसगति सग मे फस कर, जमाना क्यो गमाते हो ।
मनुष भव है वडा दुर्लभ, इसे तुम क्यो विताते हो ॥
टेक ॥

मिला है काकताली ज्यो, इसे क्या फेर पाते हो ।
छोड जिनराज की वानी, वृथा वाते वनाते हो ॥
कुसगति० ॥ १ ॥

लगी नैया किनारे पर, उसे फिर क्यो वहाते हो ।
जरा सोचो मेरे भाई, धरम धारी कहाते हो ॥
कुसगति० ॥ २ ॥

विसन सातो मे फस कर तुम, नही कुछ भी लजाते हो ।
नही है काम ये तुमरा, समझ क्यो नर्क जाते हो ॥
कुसगति ० ॥ ३ ॥

न चरचा जैन आगम की, न उसमे मन लगाते हो
न अरचा कुछ श्रीजिन की, कुदेवो को मनाते हो ।
कुसगति० ॥ ४ ॥

करो जिनराज की पूजा, धर्म को क्यो छिपाते हो ।
कहै 'चम्पा' सुसगति विन, मिनष भव क्यो गवाते हो ।
कुसगति० ॥ ५ ॥

पद

(७५)

आतम अनुभव करना रे भाई।
आतम अनुभव करना रे भाई॥

और जगत की थोती वार्ता।
तिनके बीच न परना रे॥
आतम०॥ १॥

अनुभव कारन श्री जिनवानी।
नाही के उर धरना रे॥

या विन कोई हितू न जग मे।
इक क्षण नही विसरना रे॥
आतम०॥ २॥

आतम अनुभव तै शिव सुख है।
फेर नही यहा, मरना रे॥

श्रौर वात सव वन्ध करत है।
याते वन्ध कतरना रे॥
आतम० ॥ ३॥

पर परणति ते पर वस परि है।
तातें फिर दुःख भरना रे॥
'चम्पा' यातैं पर परणति तजि।
निज रस काज सुधरना रे॥
आतम० ॥ ४॥

पद

(७६)

सम्यकदर्शन जानो रे-भाई, सम्यकदर्शन जानो रे भाई।
बिन जाने ते काल अनतो, अपनी कियो दुख टानो ।।
।। टेक ।।

मिथ्यादर्शन सम्यकदर्शन, दोउ की विधि छानो ।
सम्यक गह मिथ्या तजि दीजे, यही बात उर आनो ।।
सम्यकदर्शन० ।। १ ।।

मिथ्यादृग में तन धन जड को, धेय मान भटकानो ।
समकित महा धेय आतम निज, जो शिव सुख को थानो ।।
सम्यकदर्शन० ।। २ ।।

दूह के बीच ये ही अन्तर है, जिनवर देव बखानों ।
द्वादशाग सब याको टीका, टिप्पन को पहचानो ।
सम्यकदर्शन० ।। ३ ।।

'चम्पा' आतम ध्येय बनायो, तजि मिथ्या सरधानो ।
ताको ध्यान करो फिर निस दिन, जो चाहो कल्यानो ।,
सम्यकदर्शन० ।। ४ ।।

पद

(७७)

अमोलक जैन जाति पाई, गहो तुम शिव मग को भाई ॥
॥ टेक ॥

मनुष गति नीठ हाथ आई, करो चित समकित थिरताई ।
ज्ञान चारित से लौ लाई, इसी स भवथित नस जाई ॥
अमोलक० ॥ १ ॥

राज सपति सब थिर नाही, प्रगट ज्यो चपला चपलाई ।
मात पितु सुता सासु साई, सभी ये स्वारथ के भाई ॥
अमोलक० ॥ २ ॥

कायरता दूर करो भाई, धीरता राखो मन माही ।
कहै 'चम्पा' हित लाई, धर्म को मत छोडो भाई ॥
अमोलक० ॥ ३ ॥

पद

(७८)

कारण कोन प्रभु मोहि समझायो
॥ टेक ॥

एक मात ने दो सुत जाये, रंग रूप मे भेद न पायो ।
इक चटशाल पढे दोउ मिल, एक भयो जोगी इक विसन लुभायो ॥
कारण कौन० ॥ १ ॥

श्री गुरु कहत वचन सुनि लीजे, दोऊ दशा को भेद कहीजे ।
आतम घेय एक ने कीयो, दूजो तन धन घेय बनायो ॥
कारण कौन० ॥ २ ॥

इक चित चेत वसो निज माही, वाहर तन की कुछ सुध नाही
ध्येय सिद्ध कर भयो निरजन, जन्म मरण दु:ख दूर करायो ॥
कारण कौन० ॥ ३ ॥

दूजो तन मे आपा जान, निस दिन तामे भयो दिवानो ।
'चम्पा' रागद्वेष वस मूरख, पडि निगोद मे बहु दुःख पायो
कारण कौन० ॥ ४ ॥

*

पद

(७६)

प्यारे शांति दशा को धरो धरो, मेरे भाई ॥
टेक ॥

या बिन भव वन मै दुख पायो कबहु न चैन परो।
या ते झरित होत सुख चेतन अनुभव पान करो मेरे प्यारे
॥ शांति दशा ॥ १ ॥

पुत्र पौत्र गज वाज साज सब, धन कन भवन भरो।
विना शांति के शांति कहा है, रचपच क्यो न मरो।
मरो मेरे प्यारे ॥ शांति दशा० ॥ २ ॥

कटिक कोट वल घोटक लोटक कोट की ओट डरो।
सब भ्रम कोटि चोट जमकी ते, कोई नहीं उवरो ॥
उवरो मेरे प्यारे ॥ शांति दशा० ॥ ३ ॥

कर पर कर पदमासन नैक न, नासा दृष्टि टरो।
अचल अंग वन वास नगन तन, शांत सरूप वरो ॥
वरो मेरे प्यारे ॥ शांति दशा० ॥ ४ ॥

याहि धारि जिन शांति भए लख उन ही का ध्यान धरो।
जिन विन कोउ न तारक 'चम्पा' क्यो भ्रम ताप जरो ॥
जरो मेरे प्यारे० ॥ शांति दशा० ॥ ५ ।

पद

(८०)

ज्ञान स्वरूपी आतमा याही घट माही ।
जिन जानो तिन सब लख्यो भ्रम भाव मिटाई ॥
टेक ॥

याके ज्ञान विना सब झूठी चतुराई ।
जिन को याका ज्ञान है, तिन निज निधि पाई ॥
ज्ञान स्वरूपी० ॥ १ ॥

सरधा याकी कीजिये, तज सब कपटाई ।
निस दिन जिनवानी रटो, जानन के ताई ॥
ज्ञान स्वरूपी० ॥ २ ॥

रागद्वेष ज्यो ज्यो मिटै थिरता जब आई ।
यह विधि मारग मोक्ष को गुरु सीख सुनाई ॥
ज्ञान स्वरूपी० ॥ ३ ॥

जगत जाल मे क्यो फसे सुन चेतन राई ।
यह निकसन की वार है छोडो सिथलाई ॥
ज्ञान स्वरूपी० ॥ ४ ॥

निज कर निज मै निज लखो, पर तज दुखदाई ।
'चम्पा' सुरलभ काज यह कीजे सुखदाई ॥
ज्ञान स्वरूपी० ॥

पद

(८१)

नरभव दुर्लभ पाया रे भाई।
नरभव दुर्लभ पाया ॥ टेक॥

काल अंनत वसो साधारण, निकसत भाग लहाया रे।
इक इन्द्री थावर त्रस [1] लहै है, फिर निगोद तव जाया रे॥
नरभव० ॥ १॥

बार बार इम भ्रमण कियो बहु कठिन कठिन यहा आया रे।
फिर यह दाव मिले नही भोदू यह सतगुरु फरमाया रे॥
नरभव० ॥ २॥

या नरभव को सुरपति तरसै कब मिल है नर काया रे।
ताकू पाय वृथा तू खोवत विषयन मे वौराया रे॥
नरभव ० ॥ ३॥

कर विवेक चिद तन दोउन को निज गह तज परछाया रे।
'चम्पा' यह विधि होय सुखी चिर कर्म कलंक नसाया रे॥
नरभव० ॥ ४॥

---

१ 'लहै लहै' पाठ भी है

पद

(८२)

चेतन कुमति घर मत जाय, तोकू सुमति रही समझाय।
॥ टेक ॥

रयन दिवस विषयन मे खोया, आपा पर का भेद न जोया।
अरे यह विषय जहर मत खाय ॥ चेतन० ॥ १ ॥

हिंसा झूठ चोर धन लायो, पर नारी पर मन भायो।
अरे यह पाप महा दुख दाय ॥ चेतन० ॥ २ ॥

दर्शन ज्ञान स्वभाव न पायो, निज निधि भूल सुपर अपनायो।
अरे ये पर परणति लुभाय ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

कुमति को परिहार जु कीजे 'चम्पा' सीख सुमति की लीजे।
अरे तोय दीनी सीख- सुनाय ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

पद

(८३)

सुखिया इक जग समकती, दूजो दीसत नाहिं ।
जिन सरूप अपनो लख्यो लख्यो सुद्धातम ताहि ॥
टेक ॥

निज धन को जु धनी बना, परधन त्याग विरूप ।
ताही के बल होयगा, शिव नगरी को भूप ॥
सुखिया इक० ॥ १ ॥

विषय भोग विष सम लखे, परिग्रह दुख को जाल ।
सुजन लखे स्वारथ सगे, लीनी आतम चाल ॥
सुखिया इक० ॥ २ ॥

तन पर जानो अशुचि गृह, दुख थानक अति निंद ।
चरित मोह वश फसि रह्यौ, जो कादे[1] अरविंद[2] ॥
सुखिया इक० ॥ ३ ॥

सुरनर नाग लख जिते सब विषयन लवलीन ।
यातैं सब दुखिया भये 'चम्पा' समकित हीन ॥

---

१ कीचड २ कमल

पद

(८४)

चेतन सुनो सुमति मतिधार कुमति से प्रीत लगाने वाले ।
जगत मे निंद कहाने वाले ॥ टेक ॥

कुमता कुमति कुशीली नारि, करती विषयो का परचार ।
इसको वृथा लगाई लार रे, दुरगति के जाने वाले ॥
चेतन० ॥ १ ॥

निज परणति को तजत गवार, पर परणति मे चित को धार ।
ये तो खोटा किया विचार रे, भव वन मे भ्रमने वाले ॥
चेतन० ॥ २ ॥

सुमता शील शिरोमण सार, धरती धर्म ध्यान सुखकार ।
उसको भूला मुगध गवार रे, विषयन के सेवने वाले ॥
चेतन० ॥ ३ ॥

कुमति का करिकै परिहार, सुमति को तुम लेलो लार ।
'चम्पा' निज पर भेद विचार रे, शुभगति के जाने वाले ॥
चेतन० ॥ ४ ॥

✱

चाल–राजो

(८५)

चेतै है तौ हे रे चेतन चतुर तू चेत ले ।
फिर यह औसर जी, मिलने का नाहि ॥
॥ टेक ॥

वसि निगोद में जी कि काल बहु बीतिया ।
एक स्वास में अठ दश मरण कराई ।
फुनि भू जल दवि आदिक पर्याय पाय त्रस थाई ॥
चेतै है ० ॥ १ ॥

काल अनन्त महादुख ते सहे,
भाग जोग तैं कठिन मनुष गति पाई ।
उत्तम कुल जिन धर्म मर्म को पाय के,
मत खोवो नादान छाडि सिथलाई ॥
चेतै है ० ॥ २ ॥

यह चेतन की बार धार उर गुरु कहै,
जिनवानी गृहरण करो सुखदाई।
याके बिन जाने न जीव सुध बुध गहै,
रहो अचेतन होय जगत के माहि ॥
चेतं है० ॥ ३ ॥

तातै जिनवानी की सरधा कीजिए,
छोड कोट गृह काज भार दुःखदाई।
ग्रहरण करण के काज प्रतिज्ञा लीजिए,
'चम्पा' यह उपदेश सबनि सुखदाई ॥
चेतं है० ॥ ४ ॥

चाल—मरहठी

(८६)

तुम सुनियो मेरी बहिन, सीख हितकारी ।
श्री गुरु ने देई बताय, न भूलो प्यारी ॥
॥ टेक ॥

कोई भाग उदै से आय मनुष गति पाई,
जिन धर्म मर्म सत सगति प्रीत सुहाई।
साधर्मिन से चरचा अरचा जिनराई,
जिन मन्दिर मे यह जोग मिलो सब आई ॥
फिर मिलने को नही दाव चाव न विसारी।
तुम सुनियो ॥ ० १ ॥

जिन मन्दिर में आकर फिर क्या कीजे,
जिनवानी का कर पाठ कठ कर लीजे।
ताही का सुमरन कर फिर अर्थ गहीजे,
जब सबद अर्थ गहि लेय भाव चित दीजे ॥
यह कारज दियो बताय परम उपकारी।
॥ तुम सुनियो ० ॥ २ ॥

मन्दिर में आकर गृह की वात बनावैं,
मिल मिल के बैठें पर निन्दा जु करावें।
ते कुमता कुटिल कुनारि कुसगति पावें,
जव सुनै धर्म की वात भाग घर जावें।
ऐसी नारिन को सग तजो वयवारी
॥ तुम सुनियो ॥ ० ३ ॥

धर्मी जन करते धर्म ध्यान जहा आई,
तिनने यहा आकर घर की कलह मचाई।
यह महा विघन तिन कियो पाप उपलाई,
इसका फल भोगेगी दुरगति के माई॥
तहा केवल दु ख का भोग और नही लारी।
॥ तुम सुनियो ० ॥ ५ ॥

जिनवानी का करि ग्रहण प्रतिज्ञा लीजे,
भर जनम स्वरस को चाख वमन अव कीजे।
तजि विषय कषाय विकार शान्ति रस पीजे,
यह विधि भव दु ख तजि काल अनतो जीजे॥
'चम्पा' जिनवानी गहो वात सव टारी।
॥ तुम सुनियो ॥ ६ ॥

चाल—निहालदे

(८७)

दश लक्षण यह पर्व है जी,
कोई दशो धर्म सुखकार गहो भव्य हित जानि के जी।
॥ टेक ॥

धर्म, धर्म सब जग कहै जी, कोई विरला जाने मर्म।
जो स्वभाव आतम तनो है जी, कोई वही कहो जिन धर्म॥
क्यो न गहै भ्रम छाडि के जी ॥ दश लक्षण ॥ १।

निज स्वभाव यह धर्म है जी, कोई क्षिमा आदि दस रूप।
जो विभाव इस जीव के जी, कोई ते अधर्म भव कूप॥
क्यो न तजो गुण आगरे जी ॥ दश लक्षण ॥ ० २ ॥

जो स्वभाव मे रम रहे ते गुनी[1], अरु तजि विभाव दुःखदाय।
वही धर्म धारण करै जी, कोई होय जगत के राय॥
सुख अनन्त विलसे सही जी ॥ दशल लक्षण ० ३ ॥

धर्म वसे निज घट विषै जी, कोई पर मे मिले न सोय।
उर्ध्व मध्य पाताल मे जी कोई सब जग देख्यो ढोय॥
भ्र॰ वसि जिय भूलो फिरैजी ॥ दश लक्षण ० ॥ ४॥

---

१ मुनी भी पाठ है।

उत्तम क्षमा स्वभाव निज अरु मार्दव आरजव धर्म ।
सत्य सौच सयम सुतप जी अरु त्याग आकिचन्य मर्म ।।
ब्रह्मचर्य मिल दश भयेजी ।। दश लक्षण ० ५ ।।

धर्म जगत मे सार है जी, कोई धर्म सदा सुखदाय ।
धर्म विना इस जीव को जी, कोई न होय सहाय ।।
'चम्पा' निज घट जोईये जी ।। दश लक्षण ० ।। ६ ।।

★

चाल–जोगी रासा

(८८)

ज्ञान विना वेराग न सोभित, मूरखता दुःखकारी ।
विन जाने ते रागद्वेष को, त्याग कियो बुधिधारी ।।
रागद्वेष की रीति यथारथ, ज्ञानवान जिय जाने ।
विन जाने ते त्याग गहो, किम मूरखता मन माने ।।
।। १ ।।

ताते पहिले ज्ञान सभालो, फिर वैराग्य कराजे ।
जो पहले वैराग धरी तो, ज्ञान सुधारस पीजे ।।
धरि बैंराग ज्ञान नहिं धारे, वाहर भेप दिखावै ।
ते परमारथ भूल अनारी, वृथा काल गमावें ।।
।। २ ।।

मान कपाय जगी उर अतर, ताते भेप वनायो ।
धर्मिनि ते नित पूजा चाहै कैसो कपट रचायो ।।
पूजक आवे अति मन भावे, और न ते रिस ठानें ।
ऐसे ज्ञान विना सब किरया, मूरख के मन माने ।।
।। ३ ।।

अपनी पूजा के कारण तुम, जो यह भेप धरो हो ।
तो वैराग नाम तज याकौ, क्यो पाखड करो हो ।
पूजा होय न होय फजीता, दिना चार की वारी ।
'चम्पा' यह दिन गये सयाने, होगी वहुत खुवारी ।।
।। ४ ।।

चाल—मारवाडी

(८६)

तू चेते क्यों ना पीछे पछितासी, चेतनराय जी ।
॥ टेक ॥

ज्ञानानद चिद्रूप चिदानद, तें क्या कुमति उठाई ।
इन सग लागि अपनपो भूलो, निज निधि सब विसराई ॥
तू चेते क्यों० ॥ १ ॥

पराधीन छिन माहि छीन है, चपला ज्यों चमकाई ।
ये असार तू सार जानि कैं, धर्म ध्यान उर लाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ २ ॥

विस खाये ते इक भव माहीं, तजे प्राण अकुलाई ।
विषय जहर खाये ते भव भव, मरन लहै दुखदाई ।
तू चेते क्यो० ॥ ३ ॥

मीन पतंग गयद भ्रमर मृग, इन सब विपति लहाई ।
इक इन्द्री सेयें दुःख लहिये, सबकी कौन चलाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ ४ ॥

इनके कारण जग मे प्राणी, अपयश लहै अधिकाई ।
रावण कीचक से बौराये, बहुत अवज्ञा पाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ ५ ॥

मदिरा मोह पीय के जग जिय, पर परणति चितलाई।
निज स्वरूप को भूल अयाने, सुधबुध सब विसराई।
तू चेते क्यो० ॥ ६ ॥

'चम्पा' कहत तजो विषयनि को, सुख चाहो जो भाई।
सेये तैं दुरगति पडिजे हो, त्यागे शिव सुख पाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ ७ ॥

*

चाल—मारवाडी

(६०)

विषयनि को संग छोड दे रे, मेरे चेतन प्यारे।
कहत सुहित उपदेश, सुमति घर आई ॥
॥ टेक ॥

विषयनि को संग ना छूटे री, सुमता नारी।
जाय छूटेंगे रो, मरन जब आई ॥
॥ विषयनि० ॥ १ ॥

मरण समय यदि कुछ छूट गये, सुन चेतन प्यारे।
तदपि न छूटे कुफल, महा दुखदाई ॥
॥ विषयनि० ॥ २ ॥

कहा करु पर वस भयो, मेरी सुमता प्यारी।
भूल भई अति मोर, कुमति मन भाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ३ ॥

बीती ताहि विसार दे, मेरे चेतन प्यारे।
आगे की सुध लेय, सहज बन आई ॥
॥ विषयनि० ॥ ४ ॥

सीख तिहारी ना सुनी, सुन सुमता प्यारी।
तातैं बहु दुःख सहे, न समता पाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ५ ॥

सन्तन सों हेत भजै, मेरे चेतन प्यारे ।
तातैं भ्रमते काल, अनन्ते भाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ६ ॥

तैं परमोदी जो कि सुन, मेरी सुमता प्यारी ।
जो तू कहै सो सत्य, तू ही मन भाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ७ ॥

जिनवानी का नित धरो, मेरे मन पियारे ।
इक छिन विसरो नाहि, गहो नित लाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ८ ॥

जिनवानी जानी नहीं, मेरी सुमति पयारी ।
यातैं विषयनि बीच, रचो अधिकाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ९ ॥

समकित ज्ञान विराग धरि, मेरे चेतन पयारे ।
यातें शिव सुख होय, रहे थिर थाई ॥
॥ विषयनि० ॥ १० ॥

सुमति नारी की जिन गही, यह सीख पियारी ।
'चम्पा' वह भव पार भये सुखदाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ११ ॥

*

चाल—मारवाडी

(६१)

सुमति समझावै जी, कुमति कै लारै चेतन क्यू लगे।
म्हाने आवे अचम्भो जी ॥ टेक ॥

इसके सगमत राचो चेतन, नरक माहि ले जावे।
छेदन भेदन ताडन मारन, सूली माहि धरावै जी ॥
सुमति ० ॥ १ ॥

पशुगति मे लेजा कर चेतन, बहुते दु ख दिखाये।
भूख प्यास परवस मे रहकर, कष्ट अनेक लहाये जी ॥
सुमति ० ॥ २ ॥

मानुष गति मे जाकर चेतन, कभी न समता पावै।
इष्ट वियोग अनिष्ट सयोग मे, यो ही काल गमायोजी ॥
सुमति ० ॥ ३ ॥

पर सपति लखि झूरे चेतन, सुरग माहि तन पावै।
आर्ति रोद्र कुध्यान धारि,मरि इक इन्द्री हो जावै।
सुमति ०॥ ४ ॥

कुमती का परिहार जु कीजे, या सग बहु दु ख थाई।
'चम्पा' सीख सुमति की लीजे, यह तुमको सुखदाई।
सुमति ० ॥ ५॥

साता' भी पाठ है।

पद

(९२)

या संसार असार में, शरना कोई नाहीं ।
शरण एक निज आतमा, जो रहे निज माहीं ॥
॥ टेक ॥

और ठौर नहीं पाइये, निज शीघ्र रहाई ॥

या ससार ० ॥ १ ॥

या तन को अपनो लखौ, यह भ्रम दुखदाई ।
तू समार इसके बसे, तोहि सूझत नाहीं ॥
या ससार ० ॥ २ ॥

निज स्वरूप को खोजि के, निज में लौ लाई ।
याहीं शिव सुख लहै, यह शरण सहाई ॥
या समार ० ॥ ३ ॥

यह 'चम्पा' उपदेश के, दाता जिनराई ।
ते शरण व्यवहार सेती, जो न लखाई ॥
या ससार ० ॥ ४ ॥

दोहा

(६३)

ज्ञान तरोवर अति सघन, शोभनीक तब होय ।
जब लागै वैराग फल, नातर गहै न कोय ।। १।।

ज्ञान विना वैराग्य के, सफल न होय विराट ।
फल विन वृक्ष विलोकि के, पक्षी लागे वाट ।।२।।

या ते ज्ञानी जनन को, यही भला उपदेश ।
कोट उपाय विचार के, करे विराग विशेष ।।३।।

बडी कठिनता सो मिले, ज्ञान कला जग माहि ।
जाने सौ प्राप्ति करै, मूरख जाने नाहि ।। ४ ।।

सुत जनने के कष्ट को, पूतवती जो नारि ।
जाने वह, जानें नही, बध्या नारि कुनारि ।। ५ ।।

ज्ञान कला जिनके जगी, नही भयो वैराग्य ।
विषय कषायो मे फसे, प्रगट्यौ बडो अभाग्य ।। ६ ।।

'चम्पा' तज अज्ञान को, गहो ज्ञान सुखकार ।
भवदधि से तारक यही, ज्ञान सहित वैराग्य ।।७।।

गजल

(६४)

यह ज्ञान रूप तेरा, चेतन विचार करले ।
सब ख्याल छोडि जग के, घट बोध सलिल भरले ॥
॥ टेक ॥

तन मे तेरा वसेरा, सो भी न रूप तेरा ।
धन आदि प्रगट सब पर, इस बात को सुमरले ॥
या ते विभाव ये है, दुख बीज इने हरले ॥
यह ज्ञान ० ॥ २ ॥

सूक्ष्म शरीर अन्तर है, कारमान दुखकर ।
इस फद मे पडा तू, जिस फद को कतर ले ॥
यह ज्ञान ॥ ० ३ ॥

जिन को कहे तुमारा, यह मोह का पसारा ।
इनसे विरक्त 'चम्पा', मध्यस्थ भाव धरले ॥
यह ज्ञान ० ॥ ४ ॥

इसी कै हेत सग छोडैं।
परिषह सहैं न मुख मोडै ॥
शीत उसन और दश मसक मल नगन तन ये दुख घोर ।
इनसे विकल होय जब श्रावक, वस्त्र धरै व्रत छोड ॥
भये निर्ग्रंथ भेष धारी ॥दिगम्बर० ॥ ३ ॥

वसन दडादि कहै जाकै ।
कह्यौ जिन हेय रूप ताकै ॥
लीख जूंवादिक की घातें ।
होत थावर की क्या वातें ॥
पीछी शास्त्र कमडल इन मे, नही भोग का जोग ।
सयम ज्ञान शुचि के कारण, धरे साधु विन भोग ॥
पकडि छल लियो वसन लारी ॥ दिगम्बर० ॥ ४ ॥

वसन दडादिक धरि आवै ।
परिग्रह त्यागी कह लावै ॥
दिगम्बर की नि दा ठाने ।
न मन मे कुछ भी सरमावे ॥
यथा शक्ति जो भेष जिनेसुर, ताहि दियो छिटकाय ।
वीतरागता होय न याते, चम्पा दियो सुनाय ॥
चाल कलिकाल चली सारी ॥ दिगम्बर ॥ ५ ॥

पद

(१०१)

दिगवर भाव लिग धारी, सदा साचे अविकारी ।। टेक ।।

काम से जब तिय को जोवै ।
उदय जब काम भाव होवै ।।
काम की परीक्षा प्रगट भाई ।
होत है नगन भेष माही ।।
ढकै वस्त्र से अ ग को, जाच न होत अनग ।
विन अनग किम साध, परीक्षा भाव लिग के सग ।।
प्रगट सव जानत नर नारो ।। दिगम्बर० ।। १ ।।

दिगम्बर भेष कठिन बाना ।
ताहि तजि कीना मन माना ।।
वसन को परिग्रह नहि जाना ।
धर्म उपकरन वस्त्र ठाना ।।
वस्त्र तिय उपयोग परिग्रह, ताहि करै मुख खोल ।
श्रावक को परमान करावत, साधुन कै मुख पोल ।।
पोल विपरीत चली भारी ।। दिगम्बर० ।। २ ।।

धर्म सम्यक्त मोक्ष मार्ग सारास ।
सर्व जिनमत को यो सिद्धान्त ।।

पद

(१००)

भवि जन नमो अरहत आदिक, उनका सरणा लीजिए।
इससे विघन सब दूर होवै, ये ही मगल कीजिए ॥
॥ टेक ॥

हे दयानिधे हम सबो पर, यह अनुग्रह कीजिए।
जो इहा बैठे भविक जन, सब पै कृपा कीजिए ॥
भविजन० ॥ १ ॥

मोक्ष मारग पथ हम शुचि, जान के भर दीजिए।
फिर ना कभी नीचै गिरैं, जिन धर्मार्थी कीजिए ॥
भविजन० ॥ २ ॥

इस सभा को अब इहा, तुमरा शरण सुख बीज है।
मोक्ष फल दातार हो, हमको अमर कर दीजए ॥
भविजन० ॥ ३ ॥

जिनराज की लीनी शरन, अरजी मेरी सुन लीजिए।
भव भव मे अपने चरण का, 'चम्पा' को शरण दीजिए ॥
भविजन० ॥ ४ ॥

गजल

(६६)

सभा यह जैन शासन की, मुबारिक हो मुबारिक हो।
॥ टेक ॥

पडे जो मोह निद्रा मे, उन्हे चलकर जगाती है।
भला उपदेश दे दे कर, प्रतिज्ञा को कराती है॥
हितैषी जैनवानी की, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ १ ॥

निपट कल्याण का मारग, उसे हर दम बताती है।
कुसगति कामना खोटी, तिसे हट कर हटाती है॥
परम कल्याण करनी यह, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ २ ॥

विना जिन वचन के धारे, अपने को जैन गिनते हैं।
नही कुछ द्रव्य है घर मे, वृथा धनवान बनते है॥
ऐसे जीवो को समझाते मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ३ ॥

प्रतिज्ञा धारि जिनवानी, जिन्होने कठ कीनी है।
जगत मे धन्य ते प्राणी, विपति जिन टारि दीनी है॥

प्रतिज्ञाकार ऐसे जन, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ४ ॥

गहो जिनराज की वानी, यही अपनी कमाई है।
सुमन 'चम्पा' भला उपदेश सुन[1] माला बनाई है॥
पहनलो हे मेरे भाई, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ५ ॥

---

१ 'चुन' ऐसा भी पाठ है

चाल—नौटंकी

(९८)

कौन गुनाह है जी, नाथ मेरो कौन गुनाह है जी ।
एजी हमको तजि शिव, रमणि धरी चित ॥
कौन गुनाह है जी ॥ टेक ॥

राजुल कहै कर जोरि नाथ, अरजी चित धारौ जी ।
मै लिया चरण शरण नाथ, भव वन से काढो जी ॥
कौन गुनाह ० ॥ १ ॥

तीन प्रदक्षिणा देय, सीस चरणो में दीना जी ।
प्रभु असरण सरण सहाय नाथ, मै शरणा लीना जी ॥
कौन गुनाह ० ॥ २ ॥

कितने ही भव की प्रीति, नाथ अब क्यो विसराई ।
एजी राखो चरण मझार, शरण मैं तुमरी आई ॥
कौन गुनाह ० ॥ ३ ॥

मै भ्रम भूल वसाय सहे, भव भव दुख भारी जी ।
अब तुम चरण परसाद, कटै अघ सब दुखकारी जी ॥
कौन गुनाह ० ॥ ४ ॥

दीक्षा राजुल धरी तजो, ममता की डोरी जो ।
तजि प्राण स्वर्ग सोलह गई, चित्त सिव मग आरो जो ।
कौन गुनाह ० ॥ ५ ॥

श्री नेम गये निरवाण, उन्होने भव थित तोडी जी ।
प्रभु शरणागत प्रतिपाल लखो, 'चम्पा' की ओरी जी ।
कौन गुनाह ० ॥ ६ ॥

वहा जाय करि गिरनार पर, परदक्षिणा देती भई ॥
असरन सरन मेरे प्रभु, मैंने शरन तेरी[1] गही ।
राजुल ० ॥ ५ ॥

तज के सकल शृंगार राजुल, स्वेत साडी तिन गही ।
भाई जु बारह भावना, भव भोग ते विरकत ठही ॥
राजुल ० ॥ ६ ॥

लागी आतम से लगन, अरु देह से ममता नही ।
वह मोक्ष मारग मे लगी, निज भाव मे थिरता गही ॥
राजुल ॥ ७ ॥

सन्यास धारण कर के राजुल, सोलवे स्वर्ग गई ।
'चम्पा' कहे धन धन उसे, तिय लिग को छेदत भई ॥
राजुल ० ॥ ८ ॥

---

१ 'तुमरी' ऐसा पाठ भी है ।

पद

(६७)

तू ज्ञानी है चिद्रूपमई, क्यो देह अशुचि मे[1] मे प्रीति लई[2] ।
ये पूरन गलन स्वभाव घरे, थिरता न रहै तू मान कही ॥
॥ टेक ॥

मूत्र पुरीष भडार भरी, यह चाम की चादर ओट दई ।
घिन देह अपावन जान यही, यामे नही सार विचार सही ॥
॥ तू ज्ञानी ० ॥ १ ॥

सात कुधात की पोट मई, मुनिराज ने ममता त्याग दई ।
निज आतम शक्ति विचार सही, याते शिव नारि को जाय लई ॥
तू ज्ञानी ० ॥ २ ॥

ये पोखत पोखत जात सही, सग नाहि चलै एक पैंड कही ॥
'चम्पा' तजिये दुख दया मई, ये शुभ गति रोकन हार सही ।
तू ज्ञानी ० ॥ ३ ॥ २४ ॥

---

१ 'से' भी पाठ है । २ 'ठई' पाठ भी है ।

★

जो जिनवानी को तदा काल[1] अरचै है ।
ले आठ द्रव्य सो भाव सहित चरचै है ॥
तह सफल कमाई का बहु धन खरचै है ।
ते उलटा धन को लूट लेत परतें हैं ॥
जे जिनवानी० ॥ ३ ॥

जे जैन हितैषी बने प्रेम दिखलावै ।
जे धन दे पोथी लेय जिनके गुणगावै ॥
चटकीले लेख लिखाय जगत भरमाव ।
भोले जन विना विचार दाव मे आवै ॥
'चम्पा' ऐसे जन-निज पर हित हरतें है ॥
जे जिनवानी० ॥ ४ ॥

---

१ मूल प्रति मे सदा काल पाठ नही हैं

★

छंद-गीता

(६६)

राजुल कहै माता मेरी, श्री नेमिजी निज निधि लही ।
सब ग्रंथ तजि निर्ग्रंथ हुए, बाल वय दीक्षा गही ॥
॥ टेक ॥

अब मात आज्ञा दो मुझे, दीक्षा लहो उन पास ही ।
सब भोग तजि के जोग धारूं, येही मन वाछा ठही ॥
राजुल ० ॥ १ ॥

माता कहै राजुल, अभी वय बाल तुम सुकमालजी ।
वनवास अति विकराल बेटी तप गहो गृह मे ठई ॥
राजुल ० ॥ २ ॥

तुम देशव्रत धारन करो, गृह वास वसि मानो सही ।
तप जान मत आसान राजुल, मान अब मेरी कही ॥
राजुल ० ॥ ३ ॥

अब करो मत तुम मोह जननी, देहु मोहि आदेश ही ।
जाओ जहा पिय जोग धारी, शरन उनकी जा लही ।
राजुल ० ॥ ४ ॥

गजल

(६५)

जे जिनवानी को बेचि उदर भरते हैं।
कुल लाज छोड कर अधम काज करते हैं ॥
॥ टेक ॥

जो मोक्ष महल की ऊंची नीसरनी थी।
ससार समुद्र के तारन को तिरणी थी ॥
जिन वचन तनी आज्ञा सिर पर धरनी थी।
तजि विनय धर्म को लोभ अग्नि जरते हैं ॥
जे जिनवानी० ॥ १ ॥

आज्ञा वह क्या है जिनवर की सुन लीजे।
सरवारथसिद्धी टीका देख गहीजे।
शासन विक्रिया करि धन का लाभ करीजे ॥
ज्ञानावरणी का आस्रव हेतु भनीजे ॥
लोभी ह्वै जिन वचन लघन अनुसरते है ॥
जे जिनवानी० ॥ २ ॥

शुद्धाशुद्धि पत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पंक्ति	पृष्ठ
हृष्टि	दृष्टि	३	६
मूल-पाठशल्ल	मूलपाठ-शल्ल	१५	६
मख	मुख	७	७
रुण भरण	रुंण भुण	७	८
ससार	संसार	१२	१०
वोध	बोध	४	१२
तुम से तो कहूँ	तुम से न कहूं	११	१२
नाहि	नहि	१०	१३
खुलसा	खुलासा	७	१५
लिया	लियो	१६	१६
मोप	मोय	६	२४
भाक्ति	भक्ति	२	२८
समाभायो	समझायो	३	४०
कुकटं	कुकंट	११	४५
शतरज	शतरंज	७	५७

मगल	मगल	१०	५८
घद	घद	२	५९
नहौ	नही	८	६०
पडित	पडित	१६	६३
तुझ	तुझे	२	७२
चिदानद	चिदानन्द	१०	७२
स	से	४	७७
सतसग ,	सतसग	५	१००
कोचक	कीचक	१६	१०५
पयारी	पियारी	१०	१०८
सगमत	सग मत	३	१०९
विक्रिया	बिक्रीयाँ	११	११३
कुसगति	कुसगति	८	१२०